॥ ओ३म् ॥

जन ज्ञान मासिक

नवम्बर १९७६
मार्गशीर्ष २०३३

卐

साहस एवं दूरदर्शिता की सजीव मूर्ति—स्वदेश की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी—एक ऐसे नवयुग की सफल स्रष्टा हैं जिसमें स्वराष्ट्र ने अनेक कुरीतियों, अन्ध-विश्वासों के मूलोच्छेद का मार्ग ग्रहण किया है

卐

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी

१९ नवम्बर जिनकी जन्म-तिथि है

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द की प्रतिमा का चित्र
जिनके बलिदान की अर्ध-शताब्दी अगले मास देश-विदेश
में मनाई जा रही है ।

ओ३म्

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

जन - ज्ञान

मासिक

संपादक
राकेश रानी
सह-संपादक
सुमेधा स्नातिका
दूरभाष : ५६६६३९

पता
३५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१ नाईवाला]
करौल बाग, नई दिल्ली
११०००५

वार्षिक मूल्य १५)
विदेश में ३ पौंड
(हवाई डाक से)
२ पौंड : समुद्री डाक से
(आजीवन २५१)
वर्ष ७ : अंक ७
मार्गशीष संवत् २०३३
नवम्बर : १९७६

संपादकीय

एक प्रश्न चिह्न

सहस्त्रों वर्षों की परम्परा के अनुसार दीपावली पर्व पर घनान्धकार से आवृत्त अमा निशा में इस बार भी आसेतु हिमाचल में अनन्त दीपकों की पंक्तियाँ जगमगा उठीं। देव दयानन्द के निर्माण की स्मृति स्वरूप देश विदेश में आर्य जनों ने सभाओं, गोष्ठियों का आयोजन कर उस ज्ञान प्रकाश प्रदाता के प्रति श्रद्धा-ज्ञापन की परिपाटी भी निभा ली। फिर भी एक प्रश्न चिह्न पूर्ववत उपस्थित ही रहा।

वह प्रश्न अनुत्तरित है। प्रश्न है कि क्या घर आँगन-द्वार और खेत खलिहानों में जलाए गए इन दीपकों एवं वेद ज्ञान के पुंज देव दयानन्द के निर्वाण दिवस के अवसर पर किया गया उनके गुणों का बखान उनके मार्ग पर चलने के लिए वक्ताओं के कंठों से गूंजा उनके पदचिह्नों पर चलने का आह्वान हमारे हृदय के अंधकार को हर पाया है।

उसने हमें अन्धविश्वासों, कुसंस्कारों एवम् कुरीतियों तथा कुविचारों से उबारने के लिए अपने महाप्रयाण की अन्तिम बेला में भी हमें सभी द्वार और खिड़कियां खुली रखने का सन्देश दिया था। उसने महान् आध्यात्मिक क्रान्ति की मशाल दीपोत्सव के दिवस ही हमारे हाथों में थमाई थी। उसने हमें सौंपा था यह भार कि हम करें तिमिर का संहार फैलाएं आग-जग में हर प्राणी के अंधकार भरे मग में ज्ञान का सुभग प्रकाश। किन्तु आत्मावलोकन करें तो हमें लगता है कि हम स्वयं मनसा वाचा कर्मणा उसके सच्चे भक्त नहीं बन सके उसके प्रति अनुरक्त नहीं बन सके। हमने 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' का उद्घोष तो गुंजाया किन्तु हमारे कर्णधार स्वयं को समाज मन्दिरों की चारदीवारियों की जकड़न प्रदान कर रहे हैं उसने मत मतान्तरों से मानव को उबार उसे धर्म के पावन पथ पर पग बढ़ाने के लिए प्रेरित करने का दायित्व हमें सौंपा था किन्तु हम दूसरों का मार्गदर्शन तो क्या करेंगे स्वयं ही पथ भूले पथिक बन रहे हैं। हमने प्रकाश की जय तो बोली किन्तु अन्धकार को हृदय में बसाया है। कैसे बदलेगी और कब बदलेगी यह प्रवृत्ति यही है प्रश्न जो उत्तर चाहता है।

—राकेश रानी

भारीसंख्यामें मंगाकरप्रचारकरें

१. **सामवेद भाष्य**

पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड का अनुपम आध्यात्मिक भाष्य ।

सुनहरी जिल्द २५)

२. **वैदिक-गीता भाष्य** २०)

स्व० पं० आर्यमुनि कृत यह गीता भाष्य आज तक के सभी गीता भाष्यों में सर्वश्रेष्ठ है १५)

३. **वेदांजलि**

३६५ मंत्रों का भाष्य, प्रतिदिन के स्वाध्याय के लिए अनुपम । सजिल्द मूल्य १५)

४. **अपने प्रभु से-प्रार्थना**

आर्याभिविनय के प्रथम भाग की विस्तृत व्याख्या । श्री ज्ञानी पिन्डीदास जी के परिश्रम व स्वाध्याय का परिणाम । सजिल्द मूल्य १०)

५. **श्रीमद्दयानन्द प्रकाश : स्वामी जी का भक्तिपूर्ण जीवन**

स्वामी सत्यानन्द जी की लेखनी का प्रसाद जिसे पढ़कर आप भाव विभोर हो जाएंगे । मूल्य ६) सजिल्द ८)

६. **वेदामृत**

वेद मंत्रों का अर्थ सहित संग्रह । स्वामी वेदानन्द जी महाराज व पं० श्रीपाद दामोदर जी सातवलेकर द्वारा लिखित वेद मंत्रों का सारगर्भित अनुपम भाष्य विषयवार । मू० सजिल्द ८)

७. **अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र**

स्वामी ब्रह्ममुनि जी का खोजपूर्ण अतुलनीय ग्रन्थ । सजिल्द १०)

८. **अथर्ववेदीय मंत्र विद्या**

स्वामी ब्रह्ममुनि जी की अथर्ववेद में खोजों का अनुपम ग्रंथ । सजिल्द मूल्य ६)

९. **वेदों का यथार्थ स्वरूप**

वेद क्या हैं और क्या है उनका सत्य रूप : यह इस पुस्तक में पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड ने गागर में सागर के रूप में भर दिया है । सजिल्द मूल्य १०)

१० **संक्षिप्त महाभारत**

महाभारत का सार संक्षेप में उपस्थित है इस ग्रन्थ में । मूल्य सजिल्द १०)

रेलवे स्टेशन लिखें । १/४ धन अग्रिम भेजें ।

प्रबन्धक

जन-ज्ञान प्रकाशन

वेद मन्दिर, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

प्यार कर लो!

[कविता स्वयं अपने भाव हृदय पर लिखती चली जायेगी। अतः हम मौन रहते हुए कविता को ही अपनी बात कहने को छोड़ देते हैं। —सम्पादक]

आज मानव से यही कहना मुझे है, शेष केवल,
'स्वयम् को, अपने हृदय से प्राण, से तुम प्यार करलो ॥
कौन जाने क्यों मनुज है, प्यार करता पत्थरों से ?
और व्याकुलता जड़ों को, पूजता है निज करों से।
सत्य को भूला हुआ वह, खोजता है जो नहीं है,
और उनकी लालसा में, सोचता कुछ भी नहीं है !
यह विषमता छोड़ मानव ! सत्य का मनुहार कर लो।
और जड़ से ही नहीं तुम, चेतनों से प्यार कर लो ॥
जो मनुज हैं वे बिलखते, एक दाने के लिए भी।
घोर दुर्दिन हा ! वहाँ पर, जल न सकते हैं दिये भी ॥
यह भला क्या है बता दो, आज पशु से हम झगड़ते ?
स्वार्थ लिप्सा साधना में, बढ़ रहे सबको कुचलते ॥
छोड़ कर यह चाल मानव ! प्रेम पथ स्वीकार कर लो।
क्षुब्धता के इस भँवर में, भी सभी को प्यार कर लो ॥
प्यार करलो, आज उनसे, जो तुम्हारे से अनुज हैं।
प्यार कर लो अधिक उनसे, जो बने निर्भभ दनुज हैं ॥
हैं प्रभु के पुत्र सारे, और वह सब का पिता है।
सो सभी हैं भाई बन्धु, विश्व सबकी सम्पदा है ॥
ज्ञान की गरिमा सजा कर, विश्व का शृंगार कर लो।
और टूटी शान्ति वीणा, से पुनः प्रिय प्यार कर लो ॥
यह सभी कुछ साथ लेकर, एक सच फिर भी न भूलो।
ध्येय था अपना भला क्या ! सोचलो समझो न फूलो।
'आत्म' का आनन्द जीवन, प्राण है, स्वर्णिम मधुरता।
प्राणपति से 'ज्ञान' लेकर, ज्योतिमय हो जीव चलता ॥
पा सके आनन्द धारा, इस लिए उद्धार कर लो।
और शुचिता दीप लेकर, स्वयम् से ही प्यार कर लो ॥

—रा० रा०

—जगमोहन लाल

युग की मांग : नैतिक शिक्षा

भारत वर्ष में एक ऐसा समय था, जब यहाँ विदेशी शासकों का राज्य था। मानव का यह सहज स्वभाव होता है कि अपनी जड़ें अधिकाधिक मजबूत बनाने में प्रयत्नशील है। परन्तु दैवी नियम के अनुसार ये जड़ें कितनी ही गहरी क्यों न हो फिर भी इस विशाल वृक्ष का उन्मूलन अवश्यंभावी है। संसार अनित्य है। संसार की संस्थाएँ भी नाशवान है।

जिस समय विदेशी शासक भारत में अपना राज्य स्थापित करने में व्यस्त थे तो उन्होंने यही सोचता था कि यहां अपनी जड़ों में चिरस्थायी बनाने के लिए प्रयत्न करते रहे। इस ध्येय की पूर्ति के लिए उनके पास जो यन्त्र था वह था अनेक प्रकार के 'प्रलोभन' जिससे जनता के मन को परतन्त्रता की बेड़ी में जकड़ा जा सके। उन्होंने जनता को समृद्ध बनाने के नाम पर ऐसा उपाय सोचा जिससे वह सहर्ष गुलामी की जंजीरों में जकड़ती जाए। उक्त शासकों ने अपने कार्य संचालन के लिए स्थानीय व्यक्तियों से ही काम लेना आरम्भ किया, जिसके लिए वे विवश थे; परन्तु उन्पर पूर्ण विश्वास न कर देश की प्रत्येक प्रशासनिक इकाई अर्थात् जिले पर एक ऐसे अधिकारी की नियुक्ति करते थे, जो उनके देश के लाभ के लिए भारत वासियों को ठीक उसी तरह हाँकता था जिस तरह सारथी घोड़े की लगाम खींच कर उसे अपने गतव्य स्थान तक ले जाता है।

इस ध्येय की पूर्ति के लिये ही उन्होंने अपने देश की भाषा अंग्रेजी राजकीय कार्यों की भाषा बनाई। उस समय शिक्षा का ध्येय यह रखा था, कि जिसे प्राप्त कर व्यक्ति गुलामी करने के लिए अच्छा यन्त्र बन जाए। अपनी सुरक्षा के लिये उन्होंने गोरों की सेना के साथ-साथ भारतीयों की भी सेना को संगठित किया जो सदा उन गोरे अफसरों के अधीन रहकर उनकी आज्ञा का पालन करती थी।

शनैः-शनैं जन जागृति का समय आया और देश की जनता शासन को सुधारने की मांग करने लगी। उसका परिणाम हम आज भारत की स्वतन्त्रता के रूप में देखते है। इसके लिए जिन वीर रण बाकुरों ने भारत माता के चरणों पर अपने प्राणों को बलिदान किया, वे परमदेश भक्त और स्वतन्त्रा के पुजारी कहलाये थे। उनको यश गान कितना भी किया जाए, वह कम है।

भारत में शिक्षा प्रणाली में भी महान् परिवर्तन हुए, परन्तु नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा की ओर राज्य सरकारों का ध्यान नहीं गया, यद्यपि भारत के मिशन

स्कूल इस ओर पहले ही से जागरूक रहे हैं वे पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त अपने धर्म सम्बन्धी शिक्षा भी देते हैं.

मानव की सर्वांग उन्नति के लिए शारीरिक शिक्षा के साथ-साथ आध्यात्मिक शिक्षा की भी आवश्यकता है। दुर्भाग्य से हमारे देश में शारीरिक शिक्षा की ओर भी जितना ध्यान देना चाहिए उतना नहीं दिया जाता है। केवल मानसिक शिक्षा की ओर ही विशेष ध्यान दिया गया। उनका भी उद्देश्य यही था कि किसी प्रकार की परिक्षा पास करली जाये, इसका परिणाम यह हुआ कि आज का विद्यार्थी न शरीर से ही पुष्ट दिखाई देता है और न पढ़ने में ही रुचि रखता हैं तथा दूषित वातावरण से अधिक विकृत होकर शिक्षा के उच्च ध्येय से च्युत होता जाता हैं।

इस दशा को सुधारने के लिए अधिक परिश्रम की आवश्यकता है,

इस परिस्थिति में यदि भारत को विद्यार्थियों की उच्छृंखलता से बचाना है, तो उन्हें उचित शारीरिक शिक्षा मानसिक शिक्षा तथा आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए तैयार किया जाए। आध्यात्मिक शिक्षा में तैयार करने के लिए नैतिक शिक्षा की महान् आवश्यकता है। यह साधारण नियम है कि जब तक मानव का मन किसी बात को स्वीकार करने को तत्पर नहीं, उसे दबाव डालकर बाध्य नहीं किया जा सकता।

हम उपर्युक्त सिद्धान्त से भली भाँति परिचित ही हैं। इतने महान् ब्रिटिश साम्राज्य को भारत से निष्कासित करने का यही तो महान् मंत्र था—'असहयोग' जिसके लिए महात्मा गांधी ने भारत को पूर्णतया तैयार कर लिया था।

आज की आवश्यकता है कि हम अपने पाठ्य क्रम में ऐसे विषयों का चुनाव करें और ऐसी पद्धति को अपनाएँ जो भारत के बालकों को शारीरिक, मानसिक और नैतिक बल से सन्नित कर दें।

कैलेंडर : डायरी

१९७७ के लिए

इस बार महर्षि दयानन्द के असली चित्र के साथ कैलेंडर छपा है, डायरी तैयार है।

तुरंत आदेश भेजें।

डायरी सजिल्द : मूल्य ६) ४५०)सैंकड़ा

कैलेंडर : ६०) सैकड़ा

दयानन्द संस्थाद नई दिल्ली–५

महान क्रांतिकारी—फड़के

—अम्बरीष सक्सेना

अंग्रेजों की परतंत्रता से स्वदेश को मुक्त कराने हेतु भारत के वीरों को एक लम्बे समय तक अपने प्राणों का उत्सर्ग करना पड़ा। असंख्य वीर देश की स्वतंत्रता की इच्छा को मन में संजोये हँसते-हँसते फाँसी पर झूल गये। क्रान्तिकारियों की लम्बी शृंखला में एक नाम श्री वासुदेव बलवन्त फड़के का भी आता है। इस वीर का जन्म महाराष्ट्र के कुलावा जिले के एक गांव सिरधोन में ४ नवम्बर, सन् १८४५ को हुआ था। बचपन से ही वह विद्रोही प्रकृति के थे। बहुत कम उम्र में उन्होंने घर को छोड़ दिया। एक बार उन्होंने महाराष्ट्र के महान नेता जस्टिस रानाडे का भाषण सुना और उनके हृदय में देश-प्रेम का सागर हिलोरें लेने लगा।

फड़के ने अंग्रेजी शासन के विरुद्ध विद्रोह का दृढ़ निश्चय कर लिया। जब उन्होंने देखा पढ़े-लिखे लोगों में ऐसा करने का साहस नहीं है, तो उन्होंने अपनी दृष्टि अनपढ़ और पिछड़ी हुई जनता की ओर उठायी। पूना शहर के बाहर रामोसी नामक एक जाति रहती थी, यह जरायम पेशा जाति समझी जाती थी। सब लोग इससे घृणा करते थे। किंतु ये लोग बड़े ही साहसी होते थे। इन लोगों से आसानी से विद्रोह कराया जा सकता था, क्योंकि इन्हें मरने-मारने में कोई डर नहीं लगता था। परन्तु इन्हें संगठित करने के लिए रुपयों की आवश्यकता थी। अतएव फड़के ने रामोसियों को संगठित करके डकैतियों से धन इकट्ठा करने का निश्चय किया। कई गांवों के साहूकारों को लूटा गया और उनसे अस्त्र-शस्त्र प्राप्त करने का प्रयत्न किया गया।

बासुदेव बलवन्त फड़के को लोग महाराज कहते थे और सब लोग उनका आदेश मानते थे। अब फड़के अपनी टोली के साथ सह्याद्रि पहाड़ियों में रहने लगे। उनकी खबर सरकार तक पहुँची और चारों ओर फड़के को गिरफ्तार करा देने के लिए सरकारी इश्तिहार दिखाई देने लगे।

इन इश्तिहारों से आतंक फैल गया तीसरे दिन तक इन इश्तिहारों के नीचे लिखा मिलता था— वासुदेव बलवन्त फड़के लापता— इसके अतिरिक्त एक दिन यह भी इश्तिहार निकल गया कि जो भी व्यक्ति बम्बई के अंग्रेज गवर्नर सर रिचर्ड टेम्पल का कटा हुआ सिर लायेगा, उसे फड़के के घोषित इनाम का ड्योढ़ा इनाम

पूना शहर में कर्फ्यू लगा दिया गया। फड़के के लिए यह समय बहुत ही भयंकर था, रामोसी जाति के अपने मित्रों के साथ वह एक जंगल से दूसरे जंगल को भागते रहे। भूखे-प्यासे और वस्त्रहीन भटकते रहे, किन्तु फिर भी कभी हतोत्साह नहीं हुए। दुर्भाग्यवश, इन्हीं दिनों उनके दो विश्वस्त सहकारी मारे गये। अपने दो साथियों से वंचित होकर तथा चारों ओर घोर निराशा के बादल उमड़ते देखकर फड़के बहुत दुःखी हुए।

इन्हीं दिनों की बात है। क्रान्ति का यह देवता अपने एक मित्र कृष्ण जी गोगाटे के घर में आकर ठहरा। श्रीमती गोगटे के पेट में यह बात न पची और उन्होंने किसी पडोसी से यह बात कह दी। यह बात फैलते-फैलते मेजर डेनियल के कानों में जा पहुँची जो विशेषरूप से फड़के को पकड़ने के लिए नियुक्त थे। मेजर डैनियल तुरन्त वहाँ पहुँचे। पर उससे पूर्व ही गोगाटी और फड़के निकल गये।

जब मेजर डैनियल ने देखा कि शिकार उड़ गया है तो उन्होंने अपनी सैनिक टुकड़ी को तीन भागों में बाँटा और तीनों को तीन ओर भेज दिया। फड़के समझे कि हम बच गये, पर उनके पीछे-पीछे फौज चली आ रही थी। गोगाटे भी उनसे अलग हो गये और कहा जाता है कि वह १४ साल बाद घर लौटे।

फड़के देरनभागी गांव में पहुंचे। परन्तु वहाँ पर लोगों ने उन्हें चौपाल में नहीं ठहरने दिया। तब वह गांव के मन्दिर में गये और वहीं थके-हारे सो गये। मेजर डैनियल पीछा करते हुए वहाँ पहुंचे और उन्हें पहचान लिया। फिर फड़के एकदम से जूतों के बल उनके ऊपर कूद गये और छाती पर चढ़ बैठे। फड़के ने कहा इस प्रकार तो कायर करते हैं। आओ! पहले मुझसे द्वन्द्व युद्ध कर लो। पर वहाँ कौन सुनता? फौजियों ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। कहते हैं कि उनके सिर पर जो इनाम था, उसकी राशि हैदराबाद के निजाम द्वारा दी गयी थी।

सन् १८७९ के ३१ अगस्त को उन पर छोटी अदालत में मुकदमा चला और २२ अक्तूबर को उन्हें सेशन सुपुर्द कर दिया गया। उन पर १२१ (राजद्रोह), १२४ (राजद्रोही भाषण) और ३९५ डकैती की धारा लगायी गयीं। फड़के से लोग इतने आतंकित थे कि कोई वकील भय के कारण उनका मुकदमा लेने के लिए सामने नहीं आता था। पर गणेश वासुदेव जोशी उर्फ काका उनके वकील के रूप में सामने आये। उनके लिए यह बहुत साहस का कार्य था।

अन्ततः इस महान वीर को आजीवन कालेपानी की सजा दी गयी। उन्हें समुद्र पार अदन जेल में भेज दिया गया। सन् १८८० के ३१ अक्तूबर को फड़के जेल से किसी प्रकार भाग निकले और भागकर १७ मील चले गये। परन्तु वहाँ की भाषा आदि से अपरिचित होने के कारण फिर पुलिस वालों के पंजे में पड़ गये। उन पर निरन्तर अत्याचार होते रहे और अन्त में सन् १८८३ में इस महान विभूति का देहावसान हो गया। 卐

—चन्द्रिकाप्रसाद मिश्र

माहिष्मती की विजय-यात्रा

मध्यप्रदेश के प्रसिद्ध औद्योगिक नगर इन्दौर से लगभग ३५ मील दूर नर्मदा-तट पर महेश्वर नामक एक छोटा नगर है। पुरातत्व-विभाग ने उसके पास उत्खनन करके एक प्राचीन नगर के अवशेषों का पता लगाया है। इतिहासकारों का मत है कि ये अवशेष प्राचीन माहिष्मती नगर के हैं। पुराणों के अनुसार मालवा में, आर्यों के पहुँचने से पूर्व, नाग जाति की कर्कोटक-शाखा राज्य करती थी। यादवों की हैहय शाखा ने कर्कोटकों की सभा को परास्त कर मालवा पर अधिकार कर लिया था। हैहयों ने राजधानी का पुनर्निर्माण कराया था और अपने पूर्वज महिष्मान के नाम पर उस का नाम माहिष्मती रखा था। हैहयों ने पश्चिम की ओर बढ़कर गुजरात तक राज्य का विस्तार कर लिया था।

जिस समय दाशराज-युद्ध हो रहा था, मालवा पर कृतवीर्य का पुत्र अर्जुन राज्य करता था। अर्जुन बड़ा प्रतापी सम्राट था। उसके रहते दक्षिण की ओर से उत्तर भारत पर आक्रमण करने का साहस किसी को न होता था।

अर्जुन को जब मालूम हुआ कि वशिष्ठ की सेना पांचाल में भग कर दी गयी है तो उसने उन सैनिकों को बुलवा कर अपनी सेना में भरती कर लिया। अर्जुन की सेना पहले ही बहुत बड़ी थी। अब उसकी ओर अधिक वृद्धि हो जाने से उसे सहस्रबाहु की उपाधि प्राप्त हुई। परन्तु थोड़े दिनों में ही उसे मालूम हो गया कि इतनी बड़ी स्थायी सेना का भार उठाने की क्षमता उस मे नहीं है। अर्जुन को मालूम था कि भार्गव जमदग्नि के पास बहुत धन है, अतः उसने उनसे ऋण-रूप में कुछ धन प्राप्त करने का विचार किया। दुर्भाग्य से इस बातचीत में कुछ कटुता उत्पन्न हो गयी और क्रुद्ध अर्जुन ने जमदग्नि का वध करके आश्रम को लूट लिया।

स्वर्ण प्राप्त हो जाने से अर्जुन की तात्कालिक समस्या तो हल हो गयी, परन्तु उत्तर भारत में वह बहुत बदनाम हो गया। जमदग्नि के मामा विश्वामित्र ने, जो इस समय पांचाल-शासन के संचालक तथा वसिष्ठ जी के चले जाने से उत्तर भारत के भाग्यविधाता बन बैठे थे, इसका प्रतिशोध लेने का निश्चय किया। चूँकि दाशराज संग्राम का कटु अनुभव महाराज सुदास के सामने था, अतः उन्होंने विश्वामित्र के परामर्श की अवहेलना की और सहस्रबाहु के विरुद्ध किसी अभियान में पांचाल को डालने का विरोध किया। अंत में विश्वामित्र ने दाशराज युद्ध में पराजित राजाओं को जमदग्नि पुत्र परशुराम के नेतृत्व में महिष्मती पर आक्रमण करने को राजी कर लिया।

माहिष्मती अत्यन्त सम्पन्न नगरी थी। लूट के लालच में अलिन, तुर्वस, द्रुह्य शिम्यु, पक्थ, शिवि, विषाणी, भलान, पुरोडा और भार्गवों के विशाल दल माहिष्मती की ओर चल पड़े। इधर माहिष्मती में मालव सैनिकों के अतिरिक्त वसिष्ठ के विदेशी

सैनिक शक, यवन, पल्हव और कांबोज मौजूद थे। इस प्रकार दोनों ओर से पूरी तैयारी थी इन भाड़े के विदेशी सैनिकों पर ही दोनों पक्षों का भरोसा था।

परन्तु युद्ध-क्षेत्र में पाँसा सहस्रबाहु के विरुद्ध पड़ा। अर्जुन परशुराम के हाथों परास्त होकर मारा गया। दस राजाओं की सेना माहिष्मती को लूट कर पश्चिम की ओर चली गयी।

अर्जुन पुत्र जयध्वज ने पुनर्वास कार्य का आरम्भ किया और उसका समस्त जीवन माहिष्मती के पुनर्निर्माण पर ही केन्द्रित रहा। निराश होने की अपेक्षा हैहयों ने अपनी खोयी शक्ति को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया। विशाल साम्राज्य को छोटे-छोटे पाँच गणों में विभाजित किया गया, जिनके नाम थे, आवंत्यक, भोज, तालजंघ, वीरहोत्र और तुंडिकेर। इनका नेतृत्व माहिष्मती में प्रतिष्ठित जयध्वज के पुत्र तालजंघ के हाथ में था, अतः आगे चलकर पुराणकारों ने तालजंघों के नाम से ही इनका उल्लेख किया है।

इस युद्ध का परिणाम भारत के लिए भयंकर सिद्ध हुआ। दक्षिण में लंका का राजा रावण पंपा के राजा बालि से मिलकर भारत पर आक्रमण करने की योजना बनाने लगा। इस विशाल आक्रमण से बचने के लिए उत्तर भारत में बड़ी बेचैनी फैलने लगी। रावण और बालि की सम्मिलित शक्ति से लोहा लेने योग्य अब सिवा अयोध्या के और कोई राज्य न था। दशरथ ने पुत्रेष्टि-यज्ञ के अवसर पर एक विशाल सम्मेलन का आयोजन किया, जिसमें इन्द्र, बालि और रावण को भी आमंत्रित किया गया। रावण और बालि तो नहीं आये, परन्तु इन्द्र और वसिष्ठ ने मिलकर अंतिम और निर्णायक युद्ध की योजना प्रस्तुत की। महर्षि अगस्त्य ने इस योजना का विरोध किया और वे उत्तर भारत से दक्षिण की ओर चले गये।

इधर रावण ने स्थिति का लाभ उठाने के लिए कुछ लोगों को सहायता और प्रशिक्षण देकर आर्यों के विरुद्ध युद्ध के लिए तैयार करना आरम्भ कर दिया। ये प्रशिक्षण-केन्द्र उत्तर में नैमिषारण्य और दक्षिण में दंडकारण्य कार्य कर रहे थे।

इधर अगस्त्य ऋषि के नेतृत्व में शांतिवादी ऋषि-गण दक्षिण में उदार आर्य-धर्म का प्रचार कर रहे थे। हजारों ऋषि अपना जीवन संकट में डालकर शांति का उपदेश दे रहे थे, जिन में महर्षि अगस्त्य और उनके शिष्यों की बहुत बड़ी संख्या थी। अत्रि और उनका परिवार तथा और भी बहुत से ऋषि-गण इस कार्य में अपना सहयोग दे रहे थे। इनका नारा था "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"।

बहुत से ऋषियों को इस शांति अभियान में अपने प्राणों से हाथ धोना पड़े, परन्तु पच्चीस वर्ष के सतत प्रचार और त्यागमय आचरण के परिणामस्वरूप राम के पहुँचने तक प्रायः संपूर्ण दक्षिण में आर्य संस्कृति के प्रति श्रद्धा का भाव जाग्रत हो चुका था और विरोधियों के हिंसात्मक कार्यों का विरोध आरम्भ हो गया था।

———

संयम या इन्द्रिय-दमन की भट्टी बनाओ। धीरज सुनार हो। बुद्धि निहाई, गुरु से मिला ज्ञान हथौड़ी हो। परमात्मा का भय धौंकनी। तपस्या आग। प्रेम पात्र हो। नामरूपी अमृत गलाया हुआ सोना हो। इस तरह से सच्ची टकसाल बनती है। —गुरु नानक

साईं बाबा भगवान या ठग ?

—ए०एस० धर्म लिंगम्

श्री सत्य साईं बाबा के चेलों दावा है कि बाबा एक महान् अध्यात्मिक नेता हैं। लेकिन साईं बाबा की शिक्षाओं में ऐसी कोई बात नहीं, जो हमारे पूर्वज महापुरुष न कह चुके हों। साईं बाबा ने जनता के दुःख-दर्द दूर करने के लिए कुछ नहीं किया। फिर भी उनके भारतीय और विदेशी चेले उनकी तुलना भगवान् से करते हैं।

साईं बाबा की प्रसिद्धि उनके 'चमत्कारों' के कारण है। वह ये चमत्कार धनी लोगों से प्रशंसा पाने के लिए दिखाते हैं। इन धनियों को भी 'भगवान' की आवश्यकता है, क्योंकि इन लोगों के पास धन और प्रतिष्ठा तो है—लेकिन इनकी मानसिक शान्ति गायब हो चुकी हैं। धर्म के दावेदार सदा धनियों को अपने जाल में फँसाते रहे हैं। थोड़ा-बहुत दान देकर पंडों-पुरोहितों को खुश रखना और निर्धनों को यह कह कर दबाते रहना कि 'यह सब तुम्हारे कर्मों का फल है'' यह इन लोगों का पुराना धन्धा है। धनी लोग भी अपने गुरुओं को भगवान् से भी बड़ा मानते हैं और अब तो हमारे देश में नकली भगवानों की बाढ़-सी ही आ गई है।

साईं बाबा की ओर लोगों का अधिक ध्यान इसलिए गया है, क्योंकि वह चमत्कार दिखाते हैं—न जाने कहां से भभूत, घड़ियाँ, सोने की जजीरें, झुमके आदि प्रकट कर देते हैं। यदि वे चमत्कार न दिखाएं तो वह भी सामान्य साधुओं की ही तरह घूमते फिरें। गोगिया पाशा का कहना है कि "यदि चमत्कार दिखाने से ही कोई भगवान् हो जाता है तो साईं बाबा से अधिक चमत्कार (जादू के खेल) तो मैं दिखा सकता हूं।" दूसरी ओर हावर्ड मर्फे नामक विदेशी का कहना है कि साईं बाबा प्रकट कुछ नहीं करते, वह "साईं भण्डार" से वस्तुएं लिवा लाते हैं। वह दर्शकों को सम्मोहित कर देते हैं फलस्वरूप दर्शक उनकी चतुराई नहीं पकड़ पाते। कुछ सुशिक्षित लोगों के साईं बाबा के चमत्कारी की जाँच के लिए उनके चेलों का आह्वान किया है, जिस पर साईं बाबा इस किस्म की घटिया बातें करने लगे हैं कि "किसी को भी मेरी जाँच करने का अधिकार नहीं।" स्पष्ट है कि वह सचाई प्रकट होने से घबराते हैं। साईं बाबा के सम्मोहित भक्तों को जो घड़ियाँ भेंट की जाती हैं, वे विदेशों में बनती हैं. उन पर नम्बर और नाम भी होते हैं, अंगूठियाँ झुमके और जंजीरें भारत के किसी जौहरी द्वारा तैयार की गई होती हैं और भभूत गाय का

गोबर जलाकर तैयार की जाती है। "साईं भण्डार" में ये वस्तुएं कहां से आती हैं, इस बात की जांच होनी चाहिए।

साईं बाबा के भक्तों तक को शिकायत है कि ऊँचे पदों पर प्रतिष्ठित लोगों और लखपतियों को घड़ियाँ और सोने की चीजें भेंट की जाती हैं। खास-खास लोगों को अंगूठियाँ मामूली हैसियत के लोगों को भभूत और जो बेचारे बिलकुल गरीब हैं, उन्हें कुछ भी नहीं मिलता। अपने आपको भगवान् कहने वाले साईं बाबा यह भेदभाव क्यों करते हैं। साईं बाबा तो यहीं कहेंगे कि यह सब अपने पुण्यों और पापों का फल हैं। धनियों से पैसे बनाने और गरीबों को टरकाने करने के लिए कर्म सिद्धान्त का दुरुपयोग किया जाता है। साईं बाबा जैसे समाज वादियों को यह कहने का अवसर मिल जाता है कि कर्म सिद्धान्त ढकोसला है।

कहा जाता है कि साईंबाबा की आँखों में "गहरी अभिव्यक्ति" है। वास्तविकता यह है कि इस प्रकार की अभिव्यक्ति अनेकानेक लोगों की आँखों में होती है। इन लोगों की आँखों में यह दिखाई इसलिए नहीं देती कि लोग इनका आंखों में ध्यान से नहीं देखते जबकि नकली भगवानों की आँखों को ध्य नपूर्वक देखा जाता है। इस बात का भी कोई विशेष महत्व नहीं कि साईंबाबा सीमित सादा भोजन करते हैं, क्योंकि सीमित और सादा भोजन करने वाले लोगों की संख्या भी हजारों में नहीं, लाखों में होगी।

साईंबाबा के एक घनिष्ठ सा भी का कहना है कि बाबा में एक विशिष्ट गुण है कि वह सारी चिट्ठियां स्वयं पढ़ते हैं। समझ में नहीं आता कि इसमें खास बात क्या है? सभी लोग अपने नाम आयी चिट्ठियाँ पढ़ते हैं। फर्क है तो यह कि साईं बाबा उन चिट्ठियों की आर ध्यान नहीं देते, जो उनके विरुद्ध होती हैं।

कुछ लोग साईं बाबा की संगीतात्मक आवाज और धारा प्रवाह भाषा शैली से प्रभावित हैं। हमारे देश में अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वक्ता हैं। यदि साईं बाबा तेलुगू में अच्छा भाषण दे लेते हैं तो क्या हो गया? हमारे देश में तो ऐसे-ऐसे लोग हैं, जो दो-दो तीन-तीन भाषाओं में धाराप्रवाह भाषण देते हैं।

कहा जाता है कि साईं बाबा मानवता की सेवा के लिए अर्पित हैं और सब से एक समान प्रेम करते हैं। मानवता की तो बात छोड़िए, साईं बाबा ने भारत की जनता के लिए क्या दिया है; क्या बाबा ने कभी किसी भिखारी बधुआ मजदूर, पीड़ित विधवा अथवा पददलित अछूतों का उद्धार किया है? हम तो चमत्कार तब मानें यदि बाबा हाथ मिलाकर अस्पृश्यता, जात-पात और स्त्रियों में हीनता को दूर कर दें? भभूत और सोने के छोटे-मोटे आभूषण प्रकट कर देने से कोई समस्या हल नहीं होती।

बाबा के भक्त एक लेखक ने बाबा की तारीफ के पुल बांधते हुए लिखा है कि बाबा के जीवन का लक्ष्य है धर्म की रक्षा करना और भारत को पुनः उसका आध्यात्मिक वैभव दिलाना। लेकिन यह धर्म तो वही पौराणिक धर्म होगा न, जो बुराइयों से भरा पड़ा है और जो हमारी अवनति का मूल कारण है पौराणिक लोग स्त्रियों और शूद्रों के बारे में जो कुछ कहते है, उसे कौन मान सकता है?

साईं बाबा केवल उन वर्ण वालों का उपनयन (यज्ञोपवीत संस्कार) करते हैं। क्या यह भेद भाव नहीं ? क्या यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार सबको नहीं ? यदि बाबा में हिम्मत है तो किसी हरिजन को यज्ञोपवीत पहनाकर दिखायें अथवा किसी ब्राह्मण का यज्ञोपवीत उतरवाकर दिखाएँ ताकि हिन्दुओं में कम से कम प्रतीकात्मक समानता तो हो। बाबा ने आजतक कभी जात-पात का विचार किये बिना किये जा रहे किसी विवाह में मंगल सूत्र भेंट नहीं किया। न उन्होंने किसी विधवा अथवा परित्यक्ता का विवाह कराया। हाँ, ऊँची जात वाले लोगों के विवाहों से वह अवश्य मंगल सूत्र प्रकट करके भेंट देते हैं—आशीर्वाद भी देते हैं।

जो महिलाएँ बाबा के दर्शन करने जाती है भीड़ में उनके कण्ठ हार छीने जाने की घटनाएँ हुई हैं। इससे स्पष्ट है कि बाबा में ऐसी कोई शक्ति नहीं कि वह अपने आश्रम के अहाते में डाकाजनी की घटनाएँ रोक सकें अथवा गुम आभूषण उसके हकदारों को दिलवा सके। इसके बावजूद हमसे ऐसी बातों पर विश्वास करने को कहा जाता है कि एकबार बाबा की भक्त एक महिला फ्रांस की यात्रा पर थीं। उसका बैग गुम हो गया तो बाबा की सहायता से वह बेग मिल गया।

बाबा के भक्तों ने उनके बारे में यह धारणा प्रचारित कर रखी है कि बाबा कहीं भी बैठे किसी व्यक्ति के विचारों को जान सकते हैं और उसके विचारों को प्रभावित भी कर सकते हैं। यदि यह दावा सच होता तो बाबा अवश्य ही बंगलौर पहुंचकर उस बच्चे की सहायता करते, जो 'साईं कन्या'' के नाम से ''छोटा साईं बाबा'' बना घूमता था। जब बगलौर विश्वविद्यालय की जाँच समिति बच्चे के 'चमत्कार' देखने पाण्डवपुरा गई वह बच्चा अपनी कमर में बँधी पोटली से भभूत निकाल कर 'चमत्कार' दिखाने की कोशिश करता देखा गया, तब उसे और उसके परिवार को लज्जित होना पड़ा। बाबा क्यों न वहाँ पहुंचे और क्यों न उन्होंने भभूत प्रकट करके उस बच्चे और उसके परिवार को लज्जित होने से बचाया यह बच्चा बंगलौर की श्री सत्य साईं बाबा सेवा समिति के तत्वाधान में वर्ष से भी अधिक समय से 'चमत्कार' दिखा रहा था। फोटोग्राफर उसे घेरे रहते थे। घंटे भर तक 'भगवान श्री सत्य साईं बाबा महादेव' की स्तुति में भजन गाने के बाद भी बच्चे की पोल खुल गई। उसकी कमर में छिपाकर बाँधी गई पोटली खुल गई और उसमें से भभूत निकाली।

बाबा की उम्र पचास वर्ष है और जब वह केवल आठ वर्ष के थे 'धर्म की रक्षा के लिये चमत्कार दिखाने' प्रारम्भ कर रखे हैं। उनके दावे झूठ हैं। अभी तक वह किसी को भी सच्चा आस्तिक नहीं बना सके।

उनका सबसे ताजा पाखण्ड यह है कि वह पुनः भारत में जन्म लेंगे। इस प्रकार के दावे खतरनाक हैं। बाबा ने पाण्डवपुरा क बालक साईं कृष्ण के माध्यम से भी अपने को पुनः प्रकट करना चाहा था, लेकिन जैसा हमने ऊपर लिखा, उनका वार चुक गया। भारत में साधु महात्माओं की कोई कमी नहीं, साईं बाबा झूठी भविष्यवाणिय करके धोखा न दें। □

योगी वेमन्ना के पद

दुर्जन आदमी सदा गप्पें हाँकता है, सज्जन मीठी बातें करता है। सोना कांसे की तरह बज नहीं सकता।

✳

लोभी मनुष्य को मारने के लिए किसी दवा की आवश्यकता नहीं। उससे धन माँगा जाए तो उसमें घबराहट पैदा होगी और वह शीघ्र ही जल-भुन कर मर जायेगा।

✳

पाप कहीं परदेश में नहीं, अपने कर्मों में ही रहता है। मनुष्य अपने कर्म को पहचाने और कुकर्म करने से दूर रहे।

✳

लोहा टूट जाता है तो उसे फिर गर्म करके जोड़ा जा सकता है लेकिन मन टूट जाए तो फिर जोड़ना असंभव है।

✳

अन्जीर का फल देखने में सोने जैसा दिखाई देता है लेकिन तोड़ कर देखें तो कीड़े दिखाई देंगे सबसे अलग रहने वाले व्यक्ति का मन भी इसी तरह कलुषित रहता है।

✳

वटवृक्ष के छोटे बीज से महान वृक्ष निकलता है। शुद्ध हृदय से थोड़ा भी पुण्य कार्य किया जाए, तो उसका महत्व बहुत बढ़ जाता है।

✳

नीम का पत्ता खाते रहने से मीठा लगने लगता है। साधना करते रहने से सब कार्य साध्य हो जाते हैं।

✳

किसी के कुछ कहने से उस पर तुरन्त क्रुद्ध न होकर, सचाई पर विचार करने वाला ही सच्चे अर्थों में नीतिज्ञ है।

✳

तलवार धारण करने से ही मनुष्य वीर नहीं बन सकता।

—तेलुगु से अनूदित

हमारा प्राचीन अंतरिक्ष-विज्ञान

—श्री हरिश्चन्द्र विद्यालंकार

अंतरिक्ष यात्रा के क्षेत्र में आधुनिक विज्ञान को उपलब्धियाँ सचमुच अभिमान करने योग्य हैं। लेकिन भारत के प्राचीन विमानशास्त्रों में अंतरिक्ष-यानों के जो विवरण मिलते हैं, वे भी कम आश्चर्यकारी नहीं हैं।

विश्वंभर ने 'विमान' का लक्षण इस प्रकार किया है :—

देशाद् देशान्तरं तद्वद्, द्वीपाद् द्वीपान्तरं तथा,
लोकाल्लोकान्तरं चापि, योऽम्बरं गन्तुमर्हति,
स विमान इति प्रोक्तः, खेटशास्त्रविदां वरैः।

खेटशास्त्र (अंतरिक्ष-यात्रा शास्त्र) के उत्तम विद्वानों ने 'विमान' उसे कहा है, जो (अंबर) आकाश में, एक देश से दूसरे देश को, उसी तरह एक द्वीप से दूसरे द्वीप को तथा एक लोक (ग्रह) से दूसरे लोक को जाने में समर्थ होता है।

अन्तरिक्ष-भ्रमण को हमारे प्राचीन शास्त्रों में 'खेट कहा गया है। इस शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार है—खे अटनम्; खे अर्थात् आकाश में, अटनम् अर्थात् भ्रमण।

हमारे लुप्त शास्त्रीय ग्रन्थों में से एक है—भरद्वाज मुनिकृत 'यंत्रसर्वस्व', जिसमें ४० प्रकरण थे। इनमें से एक प्रकरण वैमानिक प्रकरण—पिछले कुछ सालों से प्रकाश में आया है। इस वैमानिक प्रकरण' में यांत्रिक विमानों की शकुन रुक्म, सुन्दर, त्रिपुर इत्यादि २४ किस्में दी गयीं हैं।

'सुन्दर विमान' उन विमानो को कहा गया है, जो शुंडाल से निकलनेवाले धुएँ के बल से चलें। 'शुंडाल' की शक्ल 'जेट' के जैसी होती है। इस प्रकार सुन्दर विमानों से अभिप्राय जेट विमानों से है।

'त्रिपुर विमान' उन विमानों को कहा गया है, जो स्थल, जल और आकाश तीनों में चलने में समर्थ हों, अर्थात् त्रिपथगामी हों।

उपर्युक्त 'वैमानिक प्रकरण' में यह भी उल्लेख किया गया है कि 'त्रिपुर विमान' इतने बड़े और अनेक कमरों वाले होते थे कि मानो वे 'जहाँ-तहां घूमने वाले घर' हों।

अगर इन त्रिपुर विमानों में 'सीत्कारी यंत्र' लगा दिया जाता था, तो ये विमान पनडुब्बी की तरह पानी के भीतर भी बहुत समय तक चल फिर सकते थे। 'सीत्कारी यंत्र का कार्य यह होता था कि वह बाहर की वायु को खींचकर नलों के सहारे उसे यात्रियों के लिए उपलब्ध कर देता था।

आजकल जो जेट-विमान चलते हैं, उनमें सब जेट एक ही दशा में लगे होते हैं इसलिए उन जेटों के बल से ये विमान एक ही दिशा में चलते हैं, या फिर, धीमे-धीमे मुड़कर दिशा-परिवर्तन करते हैं। परन्तु ऋग्वेद में एक जेट-विमान का वर्णन है, जिसमें एक ही 'जेट-चेम्बर' (कुंड) होता था, और उसमें पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊपर और नीचे इन छः दिशाओं में छः ढक्कन लगे होते थे। विमान को पूर्व में चलाना हो तो पश्चिम का ढक्कन खोल देते थे; पश्चिम में चलाना हो तो पूर्व का ढक्कन खोल दिया जाता था। इसी तरह, उत्तर में जाने के लिए दक्षिण का और दक्षिण में जाने के लिए उत्तर का ढक्कन खोल दिया जाता था।

नीचे का ढक्कन खोल देने से ये सीधे ऊपर की ओर (गुरुत्वोन्मुख) उड़ते थे। इस तरह की उड़ान को अंग्रेजी में 'वर्टिकल टेक-आफ' (उर्ध्वगमन) कहते हैं। ऊपर का ढक्कन खोल देने पर ये विमान सीधे नीचे की ओर उतरते थे—'वर्टिकल लैंडिंग' (अधोगमन)। इस प्रकार इन विमानों के लिए न तो 'रन-वे' की जरूरत होती थी और न ही लम्बे-चौड़े विमान स्थल की।

भरद्वाज कृत 'वैमानिक प्रकरण' में विमान-मार्गों के प्रसंग में पांच तरह के मार्ग बताये गए है—रेखापथ, मंडल, कक्ष्य, शक्ति, केन्द्र। इनमें से कक्ष्य मार्ग से अभिप्राय है, विमान का पृथ्वी या किसी अन्य ग्रह या उपग्रह के चारों ओर कक्षा में चक्कर लगाना या लगाते रहना।

यही वह मार्ग है, जिस पर आजकल के वैज्ञानिक, 'स्पेश स्टेशन' स्थापित करने की योजनाएँ बना रहे हैं और जिसमे आजकल तरह-तरह के ऋतुसूचक उपग्रह, 'अंतरिक्षीय वेधशालाएं' स्थापित की जाती हैं।

उपर्युक्त 'वैमानिक प्रकरण' में शत्रु द्वारा प्रयुक्त प्रहारक उपायों से भी अपने विमान की रक्षा का विधान है :

(क) यदि शत्रुओं ने अपने विमान के मार्ग में कोई 'दम्भोलि' (राकेट जैसी वस्तु) आदि फेंक दी हो, तो उसके प्रहार से बचने के लिए अपने विमान की दिशा को एकदम बदल दिया जाये; या अपने विमान को कृत्रिम मेघों में छिपा दिया जाये। इसे आजकल स्मोक-स्क्रीनिंग' कहते हैं।

(ख) यदि शत्रु ने अपनी भूमि में विमान-विध्वंसक सुरंगे गाड़ रखी हों, तो उनका पता लगाकर उन्हें नष्ट करने के लिए 'गुहागर्भादर्श यंत्र' से सुसज्जित विमान का प्रयोग किया जाये (इस यंत्र से जमीन में दबी हुई सुरंगों का पता चल जाता है) और तब विमान को उस मार्ग से बचाकर ले जाया जाये। यह 'गुहागर्भादर्श यंत्र' जमीन में छिपी हुई सुरंगों का चित्र इस यंत्र के पट पर प्रदर्शित कर देता था।

आकाश में शत्रु के आक्रमण से बचने के अनेक उपाय बतलाये गए हैं। जैसे :

यदि शत्रु के विमानों ने पास आकर अपने विमान को चारों ओर से घेर लिया हो, तो अपने विमान की 'द्विचक्र कीली' को चलाने से ८७ लिक (डिग्री) की 'ज्वाला शक्ति' प्रकट होगी। ज्वाला नहीं, बल्कि 'ज्वाला-शक्ति'—जो रेडियो तरंगों की तरह अदृश्य होती थी। शत्रु के विमानों को लक्ष्य करके इस 'ज्वाला-शक्ति' को गोलाकार में घुमा देने पर शत्रु के विमान जलकर नष्ट हो जाते थे।

उपर्युक्त भरद्वाज-कृत 'वैमानिक प्रकरण' में ऐसे कई यत्रों (साधनों) का वर्णन है, जो विशेष उद्देश्यों की सिद्धि के लिए उन विमानों में लगे होते थे। उदाहरणार्थ :

(क) वर्षा से विमान को बचाने के लिए 'वर्षोपसंहार यंत्र' का प्रयोग किया जाता था। इस यंत्र के द्वारा विमान के साथ स्पर्श में आनेवाली वायु विमान से ऊपर और आगे की ओर वेग से प्रगति करती थी और मानसून से 'संघर्ष' करके उसे निष्प्रभाव कर देती थी।

(ख) वायुमडल में उपस्थित वायु की प्रबल और विशाल धाराओं से आघात से बचने के लिए 'वात्स्यवात निरसन यंत्र' लगाया जाता था। इस यंत्र से वायु को त्रिमुखी अर्थात् तीन टुकड़ों मे विभक्त करके दूर भगा दिया जाता था।

(ग) विमान पर बिजली प्रहार न करने पाये, इसके लिए विमान के मस्तक पर जो यत्र लगाया जाता था, स्तम्भवाले उस यंत्र के उपरले सिरे पर उलटी छत्री के आकार का एक एंटेना' लगा रहता था, जो आजकल के 'रेडार एंटेना' की तरह ओर घूमते रहकर विद्युत् के प्रभाव को कोसों दूर रखता था। इस साधन का नाम था—शिरःशीलक यंत्र।

(घ) आतप अर्थात्, अन्तरिक्ष यात्रा के दौरान, सूर्य के पास के गुजरते समय सूर्याग्नि की तेज गर्मी या किसी ग्रह के वायुमंडल में प्रवेश के समय वायु के साथ विमान के निरन्तर संघर्षण से जनित अत्युच्च ताप से होने वाली क्षति से यान को बचाने के लिए 'आतपोपसंहार यंत्र' लगाया जाता था, जिससे उष्णता का नाश और शीलता का प्रसार होता था।

इस प्रकार उपर्युक्त 'वैमानिक प्रकरण' में सूर्य-बैटरियों (सोलार बैटरीज) का जिक्र है। हवाई सर्वेक्षण के लिए एरियल कैमरे' (रूपाकर्षण यत्र) का वर्णन है। बिजली से काम करने वाले ३२ तरह के वैद्युतिक साधनों (इलेक्ट्रिकल डिवाइसेज) का वर्णन किया गया है।

विज्ञान के कौन से पुर्जों को क्या काम करना है और उस काम को वे पुर्जे क्षमतापूर्वक निभा सकें, इस उद्देश्य से उन पुर्जों को 'मजबूत' बनाने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के लोह-मिश्रधातुओं (एलाय्ज) का प्रयोग किया जाता है। इस ग्रन्थ में न केवल इन मिश्रधातुओं को बनाने की विधियाँ दी गयीं हैं, बल्कि इस विषय में अधिक जानकारी के लिए कम-से-कम दस अन्य ग्रन्थों के नाम भी दिये गए हैं। □

(—नवनीत से साभार)

—व्याख्याकार—
श्री मनोहर विद्यालंकार

नमः-प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य व्यवहार

नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः।
यजाम देवान् यदि शक्नवाम माज्यायसः शंसमावृक्षिदेवाः ।।ऋक्१।२७।१३

ऋषि=आजीगर्तिः शुनःशेपः सकृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः। देवता=देवाः।
छन्दः अनुष्टुप्।

जो हमसे बड़े हैं, चाहे आयु की दृष्टि से, चाहे ज्ञान की दृष्टि से,चाहे पद की दृष्टि से और चाहे धन ऐश्वर्य की दृष्टि से, उनका यथायोग्य सत्कार करना चाहिए, उन्हें अन्न-जल पूछना चाहिए, किंतु जो हमसे छोटे हैं, उनके साथ भी नम्रता का व्यवहार करना चाहिए और उनके भी योग क्षेम की व्यवस्था करनी चाहिये।

जो युवक हैं जो घर गृहस्थी का बोझ उठाते हैं, कमाई करते हैं, धार्मिक विद्वान बन राष्ट्र की सभ्यता संस्कृति एवं विद्या का प्रसार करते हैं, सेना में भर्ती होकर देश के लिये अपनी बलि देते हैं, उद्योगो में श्रम करके समाज के लिये उत्पादन करते हैं उनका सत्कार होना चाहिए, उनके लिये अन्न जल की सुन्दर व्यवस्था होनी चाहिये और प्रायः होती भी है। लेकिन जो वृद्ध हो गये हैं, जिनमें उत्पादन करने की शक्ति नहीं, जो शिक्षा विद्या प्रदान करने के कार्य से निवृत्त हो चुके हैं, जो सेना की सेवा से निवृत्त हो गए हैं, जो अब कोई उपयोगी उत्पादक का काम नहीं कर सकते—उनका भी सत्कार होना चाहिए, उनके भोजन की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

हमें, हमारे समाज को हमारे देश के बच्चों को जो ज्ञान देता है, उन्हें उपदेश करता है, जो श्रम करके किसी प्रकार का उत्पादन करता है, जो सरकारी या वैयक्तिक नौकरी में रहकर सेवा करता है, या जो समाज के लिये उपयोगी कार्यों में धन का विनियोग करता है, वे सब देव हैं। हममें जितना सामर्थ्य हो इन देवों को इनके दान के बदले में अधिक से अधिक प्रतिदान करना चाहिये। इनका अधिक से अधिक सत्कार करना चाहिये। यदि इनमें से अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए किसी की अकाल मृत्यु हो जाए या वे असमर्थ अशक्त हो जावें, तो इन पर आश्रित इनके परिवार वालों की भोजन व्यवस्था का प्रबंध होना चाहिये। इनके आश्रितों का मान होना चाहिये। समाज में इनके बच्चों को अनाथ नहीं समझना चाहिये।

जो देव हैं। जो समाज को किसी भी रूप में दान देते हैं। तन, मन या धन से किसी भी प्रकार सेवा करते हैं। उनकी संगति करनी चाहिये, उससे कुछ न कुछ लाभ होगा।

जो समाज को देते कुछ नहीं, केवल लेते हैं। जो किसी प्रकार का श्रम नहीं करते, उनके सत्कार करने का, उनकी भोजन व्यवस्था करने का कोई निर्देश नहीं है।

यदि देश के पास आवश्यकता से अधिक हो तो ये लोग भी आराम से खा, पी सकते हैं। किंतु यदि देश या समाज पर विपत्ति आती है, अन्न की कमी होती है, राशन की जरूरत पड़ती है, तो सबसे पहले इनके राशन में से कटौती होनी चाहिए।

एक बात ध्यान देने की है। देवों के समाज में बड़े और बूढ़े, सेवा निवृत्त अनुभवी लोग शक्ति क्षीण होने से कार्य करने में असमर्थ हो जाते हैं उनके कथन, उनकी सलाह और उनके अनुभव का कभी तिरस्कार नहीं होना चाहिये। उसको सुनना चाहिए, और उस पर मनन करना चाहिए। यौवन के मद में उनकी बात की उनकी सलाह की उपेक्षा नहीं करना चाहिए। कई बार विपत्तिके समय, किंकर्त्तव्य-विमूढ़ता की अवस्था में उनके अनुभव बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं। किंवदन्ती है कि विवाह में एक दो अनुभवी वृद्धों को जरूर ले जाना चाहिये।

अर्थ—(महद्भ्यः) बड़ों के लिए (नमः) सत्कार तथा अन्न व्यवस्था होनी चाहिये। (अर्भकेभ्यः) छोटों के प्रति (नमः) नम्र व्यवहार तथा अन्न व्यवस्था रहनी चाहिए। (युवभ्यः) युवा जनों के लिये (नमः) अन्न व्यवस्था होती है और उन्हें आदर मिलता है किंतु (आशिनेभ्यः) सेवा निवृत्त, अक्षम वृद्ध जनों का भी (नमः) अन्न व्यवस्था द्वारा सत्कार होना चाहिये। (यदिशक्रन्कवाम) हममें जितना सामर्थ्य हो (देवान् यजाम) समाज को किसी भी रूप में देने वालों की अन्न व्यवस्था रहनी चाहिये (देवाः) गुणी पुरुषों (ज्यायसः) बड़े अनुभवी वृद्धजनों के (शंसम्) कथन या सलाह की (मावृश्चि) काट मत करो, आलोचना उपेक्षा मत करो।

यदि हम शुनःशेप बनना चाहते हैं सुख का स्पर्श करना चाहते हैं, तो हमें अजीगर्तिः=आजि युद्ध में गर्ति दहाड़ने वाला बनना होगा। जो आदमी हर समय हर बुराई से लड़ने को उद्यत है, उसी को सुख मिल सकता है। जो दिव्य भावनाओं के लिए तन मन या धन किसी प्रकार का त्याग करता है, वही विश्वामित्र बनता है।

२ अवश्य आएगा

योगे योगे तवस्तरं वाजे वाजे हवामहे। सखाय इन्द्रमूतये। ७४३
अनु प्रत्नस्यौकसो हुवे तुविप्रतिं नरम्। यं ते पूर्वं पिता हुवे। ७४४
आ धागमद्यदि श्रवत्सह स्त्रणीभि रूतिभिः। वाजेभिरुपनो हवम्। ७४५

ऋषिः—शुनः शेपःआजीगर्तिः। देवता इन्द्रः ऋक् १-३०-७-८-९

शुनः शेप का सामान्य अर्थ है, कुत्ते के लिंग की तरह से है लिंग जिसका अर्थात् जो कुत्ते की तरह से संभोग के लिए उचित-अनुचित का विचार किये बिना किसी भी कुतिया, चाहे वह मां ही क्यों न हो—के साथ संभोग कर लेता है। आजीगर्ति का अर्थ है जिसने अपने को छल फलक पर फेंक दिया है, जो छूत के व्यसन में फंस गया है।

ये दोनों व्यसन सामाजिक जीवन व्यवस्था को हानि पहुंचाने वाले हैं। अन्य व्यसन मनुष्य को वैयक्तिक हानि पहुँचाते हैं।

इस मन्त्र का द्रष्टा वह व्यक्ति है, जिसने स्वयं इन दुर्व्यसनों की विभीषिका को देखा है, इनसे होने वाले समाज के नुकसान को अनुभव किया है। इन व्यसनों में फंसे अपने साथियों की दुर्गति देखी है, और स्वयं को भी उसी दुर्गति के गर्त में गिरता हुआ देख रहा है। परिणामतः उसे निराशा व्याप रही है। उसे अपने किए हुए पर पश्चाताप हो रहा है। वह सच्चे हृदय से प्रायश्चित करने को तैयार है। उसे अपनी दुर्गति से उभारने वाला कोई चिकित्सक, कोई मित्र दिखाई नहीं पड़ता। निराश होकर एकमात्र प्रभु को याद करता है। उसे बार-बार भिन्न-भिन्न प्रयोग करके बुलाता है। अपने धन का विनाश, घर की बिगड़ी दशा देखकर हताश होकर फिर उसी प्रभु को पुकारता है, जिसे उसका पिता पुकारा करता था।

उसे अब अनुभव होता हैं कि चिकित्सकों और वैद्यों की सीमा को वह लांघ चुका है, अब तो यदि कोई उद्धार कर सकता है तो केवल तीनों लोकों के अधिष्ठाता परमेश्वर (त्रिलोकी नाथ) ही ऐसा कर सकते हैं, क्योंकि उनके मुकाबले का एक तो कोई उद्धारक नहीं, और दूसरे उसका यह प्रण है कि यदि कोई भी पीड़ित व्यक्ति उसे सच्चे दिल से पुकारेगा, और दुःखी की पुकार उसके कानों तक पहुंच जाएगी तो वह अवश्य सहायता के लिए उपस्थित होगा और पीड़ा को समाप्त कर देगा या सह्य बना देगा।

शुनः शेप का अर्थ सुख का निर्माता भी होता है, और इसी संदर्भ में आजीगर्ति का अर्थ है गर्त में गिराने वाली वासनाओं को (अज) दूर फेंकने वाला व्यक्ति।

पहिला ऋषि अनुत्साही, निराशावादी, दुर्व्यसनों में फंसकर अपने स्वास्थ्य व सुख को गंवाने वाला दुखी द्रष्टा था।

दूसरा ऋषि उत्साही, आशावादी, प्रत्येक स्थिति में आनन्द अनुभव करने वाला, बुरी से बुरी स्थिति को भी सुखकर बनाने का प्रयत्न करने वाला एवं दूसरे व्यसनी जनों की दयनीय स्थिति तथा उनके दुःखों से शिक्षा लेकर व्यसनों, वासनाओं तथा गर्त में गिराने वाले प्रलोभनों को दूर फेंकने वाला, सदा अनुशासन तथा नियमों के अनुकूल आचरण करने वाला, मर्यादाओं के अनुकूल बर्तने वाला आनन्दी द्रष्टा है।

वह कहता है कि विश्व के सनातन, अद्वितीय संचालक राजाधिराज को मैंने अपना सखा बनाया हुआ है। उस सखा का अटल नियम है कि वह अपने मित्र की सच्ची पुकार को कभी व्यर्थ नहीं होने देता। यह पुकार चाहे कष्ट निवारण की हो, चाहे समृद्धि प्रदर्शन की हो, किन्तु ऐसी हो कि स्पष्ट सुनाई देती हो और बहुजन के रक्षण (धर्म-संस्थापन) तथा दुष्कृत विनाश के लिए हो; बहुजन विनाश तथा स्वल्प जनहित की नहीं होनी चाहिए।

उसे अपने सखा पर विश्वास है, क्योंकि उसके पूर्वज भी कष्टों और समृद्धि के अवसरों पर उसी 'युज्यः सखा'=सर्वमित्र नेता को बुलाया करते थे, और उन्होंने

इसे बताया था कि वह सदा ही सहायता के लिए उपस्थित होता था। इसलिए उसे निश्चय है कि वह अवश्य रक्षा करेगा।

शब्दार्थ--(शुनः शेपः) सुख का उत्पादन एवं निर्माण करने वाला (आजीगर्तिः) गर्त में गिराने वाली वासनाओं को दूर फैंकने वाला पुरुषार्थी आशावादी, आनन्दी जीव अथवा (शुनः शेपः) कुत्ते के सदृश व्यभिचारी (आजीगर्तिः) छूत के व्यसन में फंसा हुआ निराशावादी दुःखी जीव—दोनों ही अपने-अपने दृष्टिकोण से (योगे योगे) प्रत्येक प्रयोग के आरम्भ में तथा (वाजे-वाजे) प्रत्येक सग्राम में या समृद्धि के अवसर पर (प्रत्नस्य ओकसः) सनातन गृह अर्थात् विश्व के (तवस्तरं) अत्यन्त सामर्थ्यवान् (तुविप्रतिम्) प्रतिद्वन्द्विता रहित (नरमिन्द्रम्) ऐश्वर्यशाली नेता को (यं पूर्वं ते पितो हुवे) जिसे पहिले तुम्हारे पितर बुलाते थे (ऊतये हवामहे) रक्षा के लिए पुकारते हैं। क्योंकि उस प्रभु का अटल नियम है कि (यदि श्रवत् हवम्) यदि वह हमारी पुकार को सुन लेगा तो (सहस्रणी भिरूतिभिः) हजारों रक्षण पुकारों के साथ (वाजेभिः) नाना समृद्धियों के साथ (उप घा आगमत्) हमारे पास अवश्य ही पहुंचेगा।

३ मर्त और अमृत

तद् यूयं पृश्निमातरो मर्तासः स्यातन। स्तोतावः अमृतः स्यात्॥

ऋक्: कण्वो घोरः देवता मरुतः। ऋक् १३-८-४।

विशाल दृष्टि

व्याख्या—मनुष्य अपने दृष्टिकोण को जितना विस्तृत करता जाता है, उसमें उतनी ही उदारता और मानवता विकसित होती जाती है। पशु केवल अपने पेट का ध्यान रखता है किन्तु मनुष्य अपने परिवार के भरण-पोषण का ध्यान रखता है। इसलिए पशु-पशु मे झगड़ा होता है, किन्तु मनुष्य समाज के अन्दर मनुष्य-मनुष्य में झगड़ा न होकर दो परिवारों में झगड़ा होता है। भाई-भाई का झगड़ा प्रसिद्ध है, किन्तु मनुष्य-मनुष्य का झगड़ा नहीं। **उनमें झगड़ा सदा विवाह के बाद होता है, पहिले नहीं।** विवाह के बाद वे वास्तव में एक परिवार के अंग न रहकर दो परिवार बन चुके होते हैं।

देश-भक्ति

मानवता की उन्नति के साथ परिवार से समाज, समाज से ग्राम और ग्राम से देश की भावना विकसित होती है। जिससे प्रेरित होकर वह देश के हित के लिये, अपने बड़े से बड़े हित और स्वार्थ को छोड़ने को उद्यत रहता है।

मातृ-भूमि या भूमि माता

इस प्रकार दृष्टिकोण के विस्तार के साथ-साथ मनुष्य में स्वयमेव स्वार्थ, त्याग

संयम, परिश्रम की प्रवृत्ति, औचित्य और न्याय की विचारणा जागृत होने लगती है अर्थात् वह सच्चे अर्थों में मनुष्य बनने लगता है।

किन्तु लक्ष्य अब भी दूर ही रहता है, क्योंकि लड़ाइयाँ और झगड़े भिन्न-भिन्न परिवारों की तरह भिन्न-भिन्न देशों में होते हैं। अभी इस युग ने कई बड़े-बड़े नरसंहार देखे हैं। इस संहार काल में न्याय और औचित्य को अलग रख दिया जाता है, सर्वत्र पाशविकता का साम्राज्य दिखाई देने लगता है। इसलिए यदि इस पाशविकता को दूर करके हमें सच्चे अर्थों में मनुष्य बनना है, अपने लक्ष्य पर पहुंचना है तो आवश्यक है कि हम और तुम पृथ्वी के छोटे-छोटे टुकड़ों को अपनी माता न समझें, अपितु नानावर्ण वाली सारी पृथ्वी को अपनी माता मान लें। परिणाम यह होगा कि विश्व के सारे निवासी हमारे भाई बहिन बन जायेंगे। सारा विश्व, सारी वसुधा एक कुटुम्ब बन जाएगा। इस 'वसुधव कुटुम्बकम्' की भावना से स्वार्थवृत्ति नष्ट होगी, न्याय और औचित्य की भावना प्रबल होगी, दूसरों के अधिकार और अपने कर्तव्य का ध्यान करके व्यक्ति संयम और परिश्रम करेगा। मनुष्य तब सच्चे अर्थों में मानव बन जाएगा।

मानव की निर्बलता

इस प्रकार सच्चे मानव समाज का व्यक्ति प्रत्येक काम विश्वहित की भावना से करेगा लेकिन दो संभावनाएँ हैं कि (१) उसमें अभिमान आ जाए। वह समझने लगे कि मैं ही सृष्टि का कर्ता-धर्ता नियन्ता हूं। (२) अथवा विश्वहित के काम करते हुए भी उसमें निष्कामता न आए। ऐसी हालत में असफल होने पर, उसे शोक और दुःख होगा। हृदय में ग्रन्थियां बन जाएंगी। तर्क-वितर्क उठेंगे। सोचेगा मैं दूसरों की भलाई करता हूँ, किन्तु ये फिर भी मेरा अनिष्ट करते हैं और निन्दा करते हैं।

अमृत-भक्त

किन्तु वसुधा को कुटुम्ब बनाने वाले तुम में से जब कोई परमेश्वर का सच्चा भक्त बन जाएगा अर्थात् समझने लगेगा कि यह सब परमेश्वर की ही शक्ति और इच्छा है, हम तो केवल निमित्त मात्र हैं; तब वह प्रतिफल की इच्छा छोड़कर विश्व हित में लगा रहेगा। निन्दा और स्तुति तथा लाभ और अलाभ उसे विचलित नहीं कर सकेंगे। हृदय में कामना नहीं रहेगी, इसलिए कभी ग्रन्थियाँ नहीं बनेंगी। परिणामतः वह अमृत बन जायेगा, द्वन्द्वातीत और जीवन्मुक्त कहाएगा।

यही बात मुण्डकोपनिषद् के शब्दों में कही गई है:—"तरतिशोकं तरतिपाप्मानं गुहाग्रन्थिभ्यो विमुक्तोऽमृतो भवति" ३-२-९ ॥

शब्दार्थ—(यूयं) तुम लोग (यद्) जब (पृश्निमातरः) भूमि को अपनी माता मानने लगोगे तब (मर्तासः स्यातन) सच्चे अर्थों में मनुष्य बन जाओगे। (वः) और तुम सच्चे मानवों में से जो (स्तोता) परमेश्वर का भक्त बनेगा वह (अमृतः स्यात्) अमर बन जाएगा।

मानव और अमृत बनने का मार्ग है कि तुम (काण्वः घोरः) घोर परिश्रम करके कण-कण थोड़ी-थोड़ी प्रगति करने वाले बनो। एकदम छलांग मारने का प्रयत्न न करके क्रमशः उन्नत होते जाओ।

४ नेता कौन बनेगा

उशिक् पावको वसुर्मानुषेषु वरेण्यो होता धायि विक्षु ।
दमूना गृहपतिर्दम आ अग्निर्भुवद् रयिपती रयीणाम् ।। ऋक् १-६०-४

ऋषि=नोधा गौतमः । देवता=अग्निः ।

नोधा का अर्थ है (१) [नुस्तुतौ]=स्तुति के द्वारा समाज को धारण करने वाला (२) [नवधा]=नौ प्रकार से समाज का धारण करने वाला (३) [नः धा] हमारा धारण करने वाला ।

गौतम—गो का अर्थ पृथ्वी, वाणी, किरण और गौ । इन चारों पदार्थों को धारण करने वाले, इनका उपयोग करने वाले, इनके द्वारा समाज को लाभ पहुंचाने वाले गो कहलाते हैं । इन व्यक्तियों में जो उत्तम है वह गोतम बनेगा, और गोतम वंश में उत्पन्न होकर स्वयं भी गोतम बनने का प्रयत्न करने वाला व्यक्ति गौतम ऋषि कहलाएगा ।

इस मन्त्र में बताया गया है कि कौन व्यक्ति (अग्निः) आगे ले जाने वाला नेता, प्रशासक, पति, पिता (आभुवत्) बनता है, या बनना चाहिए, या बनने का अधिकारी है ।

१. **उशिक्**—जिसकी आगे बढ़ने की कामना है अर्थात् जो महत्वाकांक्षी है और जो समाज को आगे ले जाना चाहता है ।

२. **पावकः**—केवल महत्वाकांक्षा तो कुपथ पर भी ले जा सकती है । एक बार पद पर पहुँचकर उससे चिपक सकता है । उससे हटने का मन ही न करे तो उसे हटाना पड़ता है वह उस पद का अधिकारी नहीं रहता । नेता या शासक बनने का अधिकारी तभी तक रहता है, जब तक स्वयं पवित्र है, अपने कमाई के साधन पवित्र रखता है, अपने सहायक पवित्र व्यक्तियों को बनाता है, और फिर जब तक स्वयं पद पर रहता है, तब तक दूसरों को अपवित्र साधनों का प्रयोग नहीं करने देता । अपवित्र या भ्रष्ट कमाई करने वाले अपने सहायकों मित्रों को एकदम पृथक् कर देता है ।

३. **वसु**—सब को बसाने की मनोवृत्ति रखता है, अपने विरोधियों के साथ भी अन्याय या ज्यादती करके उन्हें उजाड़ना या बदनाम नहीं करना चाहता । उचित तथा न्याय्य उपायों द्वारा विरोध करने वालों से मित्रता का व्यवहार करता है, उनके उचित परामर्शों को मानता है; उनकी योग्यता का आदर करता है ।

४. **वरेण्यः मानुषेषु विक्षु अधायि**—मानवीय प्रजाओं में ऐसा व्यक्ति वरणीय समझा जाता है । इन गुणों वाले व्यक्ति को ही नेता या प्रशासक बनाना

चाहिए। इन गुणों से रहित व्यक्ति को प्रशासक बनाने से प्रशासन बदनाम हो जाता है।

५. **होता**—उत्तम कर्मों के लिए इनाम देता है, प्रोत्साहित करता है, तथा दुष्ट कर्मों के कारण बड़े-से-बड़े व्यक्तियों की सुख-सुविधाओं, कीर्ति प्रतिष्ठा और घर द्वार तथा धन को छीन लेता है। इन दोनों प्रकार के कर्मफल में कभी संकोच नहीं करता। अपने पराए का लिहाज नहीं करता। अपने दल तथा विरोधी दल के व्यक्ति में भेद नहीं करता। नेता या प्रशासक बनने के लिए यह गुण केन्द्र स्थानीय है। कालिदास के राजा के लिए वर्णित (अधृष्यश्चाफिगम्यश्च) गुण को प्रदर्शित करने वाला एक शब्द 'होता' है।

६. **दमूना**—दान्त है मन जिसका, नेता या प्रशासक बनने के लिए केवल कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों पर ही विजय यथेष्ट नहीं है। इसके लिए मन का **संयम**= दमन भी अत्यन्त आवश्यक है। स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय महात्मा गाँधी के नेतृत्व में जो त्यागी और तपस्वी दिखाई देते थे। वे भी शासन में पदारूढ़ होने के बाद भ्रष्ट हो गए। इसका कारण यह था कि वे सम्भवतः जितेन्द्रिय तो थे, किन्तु वे दमना नहीं बन पाए थे। इसलिए नेता या शासक में यह गुण होना अनिवार्य है।

७. **गृहपति**.—नेता या शासक के लिए होता अर्थात् दुष्टों को दण्ड तो देना है, किन्तु इस प्रकार दण्ड देना है कि उसका राष्ट्र विघटित न हो जाए। जिस प्रकार एक सद्गृहस्थ अपने घर की व्यवस्था करता है, उन्हें डराता-धमकाता है, उन्हें सुख सुविधाएँ देता है, लाचारी में गृह-व्यवस्था से अलग भी करता है। उसी प्रकार राजा को गृहस्थ के घर की तरह से अपने राष्ट्र का धारण करना है। लाचारी में देश निकाला व मृत्युदण्ड भी दिया जा सकता है।

८. **रयिपतिः**—शासक को धन का स्वामी होना अनिवार्य है। राष्ट्र बिना धन के चल नहीं सकता। धन प्रजा से ही मिलना है। धन-प्राप्ति के लिए कर-व्यवस्था आवश्यक है। किन्तु ये कर इतने उचित तथा ऐसी मात्रा में होने चाहियें कि प्रजा इन्हें अपना कर्तव्य समझकर दानरूप में देती रहे। उसे कर देते हुए मनो-व्यथा अनुभव न हो। कर संग्रह में यदि पक्षपात नहीं होता है। अधिकारियों के साथ अनुचित रियायत नहीं होती है। अर्थात् कर संग्रह करने वाले यदि भ्रष्ट नहीं है, तो प्रजा के सम्पन्न वर्ग को अपना धन राष्ट्र की सेवा व उन्नति के लिए दान करने में दुःख नहीं होता, वे सुख तथा सन्तोष अनुभव करते हैं।

इसलिए राजा को ऐसे धन का स्वामी होना चाहिए, जो कोषागार में दान रूप में आया हो। जिसे देकर प्रजा दुःखी न हुई हो। जिसे एकत्रित करने में अस-मानता न बर्ती गई हो।

९. **अग्निः**—शासक या नेता को अग्नि के समान होना चाहिए जैसे ठण्ड से परेशान व्यक्ति को अग्नि शांति तथा सुख देता है। उसी प्रकार शासक को दुःखी, रोगी, कष्ट में पड़ी हुई प्रजा के लिए सुख-सुविधाओं का प्रबन्ध करना चाहिए। और जिस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अग्नि के संयोग में एकदम नष्ट हो जाते हैं। उसी प्रकार दुष्ट-प्रजापीड़क, व्यभिचार तथा रोगों को फैलाकर कमाई करने वाले व्यक्तियों के साथ ऐसा व्यवहार करना चाहिए कि राजा के ज्ञान में आते ही ऐसे लोग एकदम

नष्ट हो जाएं, समाप्त कर दिए जाएं। उनमें समाज को बिगाड़ने की शक्ति ही न न रहे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपरोक्त ९ गुणों को धारण करने वाला, अपनी इन्द्रियों पर संयम करने वालों में श्रेष्ठ अर्थात् मन पर भी काबू रखने वाला व्यक्ति इस मन्त्र का ऋषिः 'नोधा गौतम' बनेगा।

नोधा गौतम बनने वाला व्यक्ति ही घर में, समाज में, राष्ट्र में अग्नि की तरह देदीप्यमान नेता या शासक बनने का अधिकारी अग्निः इस मन्त्र का देवता बन सकता है।

मनुष्य ऋषि बने बिना देवता नहीं बन सकता। यदि व्यक्ति को किसी मन्त्र का देवता बनना है तो पहिले उसे, उस मन्त्र का ऋषि बनना चाहिए।

शब्दार्थ—(उशिक्) कामना करने वाला महत्वाकांक्षी (पावकः) स्वयं पवित्र तथा दूसरों को पवित्र करने वाला (वसुः) दूसरों को बसाने वाला (होता) पुरस्कार तथा दण्ड देने का सामर्थ्य रखने वाला व्यक्ति (मानुषेषु विक्षु) मानवीय प्रजा में (वरेण्यः) वरणीय—निर्वाचन योग्य (अधायि) समझा जाता है। (दमे) घर में (गृहपतिः) सद् गृहस्थ की तरह से (रयीणाम्) दान-रूप में स्थित धनों का (रयिपतिः) धन का स्वामी बनकर रहने वाला व्यक्ति (अग्निः) अग्नि के समान देदीप्यमान नेता या प्रशासक (आभुवत्) बनता है, बनना चाहिए, बनने का अधिकारी है। अयं स होता द्विजन्मा। १-१४९-५ के अनुसार भी होता में दो प्रकार के गुण होने चाहिए।

होता—हु-दानादनयोः—(दान) सज्जनों या जरूरतमन्दों को दान देने वाला, और (आदान) दुष्टों या बहुत संग्रह करने वालों से छीनने वाला, या (अदन) कररूप में लेकर खाने वाला।

५ मायावी को माया से

इन्द्र तुभ्यमिद द्रिवोऽनुत्तं वज्रिन् वीर्यम्।
यद्ध त्यं मायिनं मृगं तमु त्वामाययावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम्॥

ऋषिः—गोतमो राहूगणः। देवता—इन्द्रः। ऋक् १-८०-७

शब्दार्थ—(इन्द्र) हे परमैश्वर्यशालिन् (अद्रिवः) पत्थर के तुल्य कठोर शरीर वाले, अथवा आदरणीय (वज्रिन्) सदा हथियार रखने वाले अथवा गतिशील व्यक्ति (तव वीर्यम्) तेरा पराक्रम अथवा सामर्थ्य सदा (अनुत्तम्) अतिरस्कृत रहता है, क्यों कि तू (स्वराज्यं अनु अर्चन्) अपने राज्य के नियमों का पालन करते हुए अथवा अपनी इन्द्रियों पर नियन्त्रण रूप स्वराज्य के अनुरूप देदीप्यमान रहता

हुआ (त्वम्) तू (मायिनम्) माया=छल-कपट का व्यवहार करने वाले (मृगम्) पशुतुल्य व्यवहार करने वाले (तम्) उस व्यक्ति को (मायया) छल-कपट द्वारा (हर ही (अवधीः) मारता है। अथवा मृगं अन्वेषण करने वाले (मायिनं) ज्ञानी व्यक्ति को (मायया) ज्ञान के द्वारा (अवधीः) प्राप्त होता है।

भावार्थ—माया का अर्थ बुद्धि और छल-कपट दोनों हैं अर्च धातु का अर्थ पूजा करना, पालन करना तथा चमकना है। अर्थात् यथा योग्य व्यवहार या जैसे के साथ तैसा व्यवहार करना चाहिये। जो बुद्धि पूर्वक किसी अन्वेषण में लगा हो उसे बुद्धि द्वारा ज्ञान देना चाहिए। और जो छल-कपट द्वारा पशुतुल्य व्यवहार में व्यस्त हो, उसे छल-कपट की नीति द्वारा ही मारना चाहिए। वध—हन् धातु का रूप है। हन हिंसागत्योः है। गति का अर्थ ज्ञान, गमन प्राप्ति होता है।

जो मनुष्य अपने शरीर को पाषाण तुल्य दृढ़ बनाता है, सर्दी गर्मी के प्रकोप को सहन करने योग्य स्वस्थ शरीर वाला तथा सबकी प्रशंसा प्राप्त करता है, वह अद्रिवान् कहाता है। और जो सदा गतिशील बना रहता, कभी निराश होकर बैठे नहीं जाता, अपितु अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में लगा रहता हैं; और सदागतिशील कर्मठ रहने से जिसका शरीर वज्रतुल्य कठोर बन जाता है तथा अपने लक्ष्य की प्राप्ति में अहिंसा को भी बाधक नहीं बनने देता, अपितु जरूरत पड़ने पर हथियार को भी अपने हाथ में धारण करता है, और उसका योग्यता के साथ प्रयोग भी करना जानता है वह व्यक्ति वज्री कहलाने का अधिकारी है।

वज्री और अद्रिवान् बनने के लिए आवश्यक हैं कि मनुष्य अपनी इद्रियों को प्रशस्त रक्खें, उन पर नियन्त्रण रक्खें, व्यर्थ ही विषय भोग ऐश आराम में न फंसे। उसका यह स्वभाव ही बन जाए और जब भी समाज में संयमी या त्यागियों की चर्चा चले तो उसकी गणना उनमें अवश्य हो। ऐसा व्यक्ति गोतम राहूगण कहलाता है। जो गोतम राहूगण बन जाता है। वह वज्री और अद्रिवान् तो स्वयमेव बन जाता है। फिर जिसमें ये चारों गुण आ गए वही इन्द्र बनता है।

और जो व्यक्ति उपरोक्त गुणों को अपने अन्दर धारण करके सच्चा इन्द्र बन गया है। उसके पराक्रम को कोई तिरस्कृत नहीं कर सकता। उसका पराक्रम कभी व्यर्थ नहीं जाता। वह सदा सफलता प्राप्त करता है।

इस सफलता का रहस्य यह है कि वह सबके साथ यथायोग्य प्रीति पूर्वक धर्मानुसार व्यवहार करता है। दुष्टों के साथ दुष्टता को अपनाने में भी नहीं हिचकता हिंसकों के साथ मुकाबला करने में वह अपने हाथ में बड़े से बड़े हथियार लेने को उद्यत रहता है। अपने लक्ष्य की प्राप्ति में अहिंसा-धर्म को वह कभी बाधा नहीं बनने देता, हिंसा का भी प्रयोग कर लेता है।

दुष्टों के साथ दुष्टता बरतते हुए, और कपटी के साथ छल करते हुए भी अपने देश के कानून की पूजा या पालन तो करना ही चाहिए। जिससे कि स्वयं किसी मुसीबत में न फंस जाए।

दुष्टता और छल-कपट का व्यवहार करने का अधिकारी वही है जो अपनी इद्रियों पर नियन्त्रण रख सकता हैं। अपने दुर्गुणों और स्वार्थ को छोड़कर पराथ करने वालों की श्रेणी में जिसकी गणना होती है। जो कभी आलसी प्रमादीन बनकर

लक्ष्य पूर्ति के लिए सदा प्रयत्नशील बना रहता है और जिसका शरीर पाषण तुल्य कठोर बना हुआ है।

६ जगत् में किसी वस्तु की कमी नहीं

असिहि वीर सेन्योऽसि भूरिपरादर्दिः ।
असिदभ्रस्य चिद्वृधः यजमानायशिक्षसि, सुन्वतेभूरिते वसु ।।

ऋषिः—गोतमो राहूगणः । देवता—इन्द्रः । ऋक् १-८ १-२

हे इन्द्र परमैश्वर्य शालिन्, शक्ति भक्ति और कृति (शची) के स्वामिन् आप वीर हैं सामान्य वीर नहीं, शत्रुओं की बड़ी-बड़ी सेनाओं को दूर-दूर तक खदेड़ने का सामर्थ्य रखते हो। सेना कितनी ही विशाल हो, ओर बार-बार आक्रमण चाहे करती हो, किन्तु आप का कुछ नहीं बिगाड़ सकती। आप उसे दृष्टि मात्र से भस्म कर देते हो। फूंक मार कर उड़ा देते हो।

आप अपने भक्तों की सदा देख भाल रखते हो। वे चाहे शक्ति के कार्य में लग दूसरों का दुःख दूर कर रहे हों। भक्ति के काम में लग कर ज्ञान कार्य कर रहे हों, दूसरों का अज्ञानान्धकार दूर कर रहे हो। अथवा किसी भी कर्म द्वारा मनुष्यों की सेवा द्वारा आपकी भक्ति कर रहे हों। **आप भक्तों के कार्य के परिमाण पर ध्यान नहीं देते। भक्त की भावना को देखते हो।** भक्त चाहे दरिद्र ब्राह्मण, या किसान हो और चाहे ज्ञानी महात्मा व महाराजा धिराज हो—आप तो उसे बढ़ाते ही रहते हो। सदा आगे ही आगे, ऊपर ही ऊपर ले जाते हो।

आप यजमान को चाहे वह ज्ञान कार्य में लगा हो चाहे वह सत्यसंगति या भक्ति में लगा हो, और चाहे रोगों को दूर करके स्वास्थ्य दान कर रहा हो, चाहे विद्या दान द्वारा अज्ञान को दूर कर रहा हो, चाहे अन्न दान द्वारा भूखों की भूख को शान्त कर रहा हो, और चाहे दण्ड दान द्वारा पीड़ितों दुखितों को न्याय दे रहा हो—आप उसकी आवश्यकता के अनुसार उसे शक्ति देते ही रहते हो, उसमें दान की मनोवृत्ति को पुष्ट करते रहते हो।

जो परिवार, समाज या राष्ट्र के हित के लिए उपयोगी उत्पादन में लगा हुवा है, उसके लिये आपके पास पदार्थों का अखुट भंडार है। उसमें किसी पदार्थ की कमी नहीं। सनातन काल से देते चले आये हो, अनन्त काल तक देते चले जाओगे फिर भी वह उतने का उतना ही रहना है।

मैं आप का यजमान हूं, चाहे कितना ही क्षुद्र हूं। मुझ पर काम, क्रोध, लोभ, मोह की सेना ने आक्रमण किया हुवा है। मैं विषयों को छोड़ने में सतत् प्रयत्नशील हूँ (राहूगण बनने के लिए) इन्द्रियों को काबू करने में (गोतम बनने में) लगा हूं। मुझपर भी तो कृपा कीजिए।

शब्दार्थ—हे प्रभु आप (वीरः असि) वीर हैं। (सैन्योऽसि) पूरी सेना से लड़ने में समर्थ हैं (भूरिपराददिः) बहुत दूर खदेड़ने में समर्थ हैं। (दभ्रस्यचिद्) छोटे से छोटे को (वृधः) बढ़ाने वाले हैं। (यजमानायशिक्षसि) अपने यजमान को सब कुछ देते हैं। (सुन्वते) उत्पादन करने वाले के लिए (ते वसु) आपका धन (भूरि) अनेक विधि तथा अनन्त है।

७ सौभाग्यशाली मनुष्य

सुभगः स प्रयज्यवो सकतो अस्तु मर्त्य :।
यस्य प्रयाँसि अर्षथ। ऋक् १-८६-७।

ऋषिः गोतमो राहूगणः। देवता मरुतः। गायत्री छन्दः :।

सदा उत्तम यज्ञादि कर्म करने वाले, समाज में उत्कृष्ट जनों को संगठित करने वाले, श्रेष्ठ कर्मों की पूर्ति के लिए दान का प्रबन्ध करने वाले लोग 'प्रयज्यवः' (प्र+यज=देव-पूजा संगतिकरण दानेषु) कहाते हैं। इसी प्रकार अपने जीवन को पूर्णता की ओर अग्रसर करने के निमित्त प्रतिदिन नये-नये प्रयोग करने वाले व्यक्ति भी प्रयज्यवः (प्र+युज) कहाते हैं। महात्मा गांधी इसी प्रकार के प्रयज्यु तथा मरुत् थे। वे कहा करते थे कि मैं प्रतिदिन सत्य के नये-नये प्रयोग करता रहता हूं। इन उत्तम कर्मों को अथवा नये-नये प्रयोगों को करते हुए, जो व्यक्ति अपने प्राणों का उत्सर्ग करने के लिये उद्यत रहता है। बड़े से बड़े कष्टों और राज भयों की उपेक्षा करके, कड़ी से कड़ी परीक्षाओं में भी अडिग रहते हुए अपने दीक्षित व्रतों के पालन में प्राणों को बलिदान देने वाला व्यक्ति मरुत् बनता है।

सच्चे देश भक्त राष्ट्र नेता बड़े-बड़े दार्शनिक दर्शन-श्रवण मनन निदिध्यासन में लगे मनीषी, अपने देश के लिए आत्म बलिदान करने वाले सैनिक, परार्थ कर्मों के निमित्त अपना सर्वस्व त्यागने वाले धनपति और रोगियों, विद्वानों, देश भक्तों की सेवा करने वाले सभी लोग 'प्रयज्यु' तथा मरुत् हैं।

प्राणों की साधना में लगे रहने वाले योगी भी मरुत् कहाते हैं। वे भी नित्य नये-नये प्रयोग —नई-नई प्रक्रिया करते हैं।

ये सब लोग सारे समाज द्वारा, शासन द्वारा पूजा किये जाने के योग्य होते हैं। इन्हीं लोगों की प्रशंसा होती है। ये जिस क्षेत्र में, जिस समाज में पहुंच जाते हैं, सर्वत्र इनकी पूजा होती है।

इस प्रकार सबके द्वारा पूजनीय वही बन सकता है—१ जो गोतम=प्रशस्त शासन सम्पन्न बने या जो अपनी इन्द्रियों पर सयम रखने वाले जितेन्द्रिय व्यक्तियों में श्रेष्ठतम हो २. जिसमें त्याग की भावना हो केवल स्वार्थ से प्रेरित होकर ही कर्म न करता हो, परार्थ के निमित्त दुःखियों के दुःखों को दूर करने के लिए अभाव ग्रस्तों के अभावों को मिटाने के लिये जीवन बिताने वालों में जिसकी गणना होती है वह व्यक्ति राहूगण (रह त्यागे राहुः—तेषु गण्यते) बनता है।

यह व्यक्ति अपनी इन्द्रियादि प्रजाओं का सच्चे अर्थों में राजा बनता है। उन पर नियन्त्रण रखता है। परिणामतः न तो कभी पराधीन-परतन्त्र बनता है, और न ही कभी उच्छृंखल होता है।

ये उपरोक्त प्रयज्यु तथा मरुत् लोग जिस मनुष्य के प्रयत्नों को पूर्ण करते हैं; जिन मनुष्यों के उद्देश्यों को ग्राह्य मानकर उनकी सहायता के निमित्त—समाज के लब्ध प्रतिष्ठ लोग तथा शासन में उच्च पदों पर स्थित अधिकारी भोग पदार्थ अथवा उनकी दैनिक जीवन की आवश्यकतायों को पूर्ण करते हैं; वही मरण धर्मा मनुष्य सौभाग्यशाली (सुभग) है।

वास्तव में सौभाग्यशाली तो वह है, जिसे परहित में पूर्णरत रहने के कारण अपने जीवन की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए स्वयं परिश्रम नहीं करना पड़ता। जिसके भोगों की परवाह समाज के स्तम्भ और राजा लोग करते हैं। यह तब तक संभव नहीं जब तक व्यक्ति ज्ञानी. जितेन्द्रिय तथा दूसरों के लिए अपने सुखों को त्यागने के लिये उद्यत न हो।

शब्दार्थ—(प्रयज्यवः) अच्छे यज्ञादि कार्य करने वाले तथा नित्य नये-नये प्रयोग करने वाले (मरुत्:) दूसरों के दुःखों को दूर करने के लिए अपने प्राणों का बलिदान देने को उद्यत रहने वाले महाप्राण व्यक्ति (यस्य) जिस के (प्रयांसि पर्षथ) प्रयत्नों को पूरा करते हैं अथवा जिसे (प्रयांसि पर्षथ) प्रीति करने योग्य पदार्थों को परसते=देते हैं (समर्त्यः) वह मनुष्य (सुभगः) सौभाग्यशाली (अस्तु) होवे या बनता है इसका उपाय है कि सौभाग्यशाली बनने का इच्छुक मनुष्य सदा (गातमः) ज्ञानी तथा जितेन्द्रिय बनने का प्रयत्न करता रहे और (राहूगणः) त्याग भावना वाले व्यक्तियों में अपनी गणना कराने का उपाय करता रहे।

८ दुर्मति दूर रहे

त्वं तमिन्द्र वावृधानो अस्मयुरमित्र यन्त
तुविजात मर्त्यं वज्रेण शूर मर्त्यम्।
जहि यो नो अघायति श्रुष्णुष्व सुश्रवस्तमः
रिष्टं न यामन्नप भूतुदुर्मतिर्विश्वापभूतु दुर्मतिः॥ ऋक् १-१३७-७

ऋषिः—परुच्छेपः। देवता—इन्द्रः। भुरिगष्टिश्छन्दः।

आप अपनी नानाविध सामर्थ्यों तथा कृपाओं द्वारा अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। आप के समान कोई शूर नहीं है। इस विश्व में प्रसिद्ध हुए शूरवीर, अपनों के साथ पक्षपात लिहाज करते हैं, उन्हें दण्ड देने में उनका मुकाबला करने में हिचकते हैं। किन्तु आप अपने या पराए किसी के सामने निष्प्रभ या भयभीत नहीं होते।

जो मनुष्य अपने लक्ष्य को पूर्ण करने के प्रयत्न में मरने के लिए उद्यत रहता है, उसे आप गति के द्वारा बढ़ाने वाले हैं, और जो दूसरों के साथ अमित्रतापूर्ण

व्यवहार करता है और परिणामस्वरूप अपने पाप के फल रूप मृत्यु से डरता है, उसे आप अपने नियत वज्र रूप दण्ड या कर्मफल से अवश्य मार देते हैं। आप कर्म फल देते हुए जरा भी पक्षपात नहीं करते। न आप किसी को बढ़ाते हुए हिचकते हैं, न किसी को मारते हुए घबराते है।

आप हमारे अपने हैं, हमारा सदा उत्कर्ष चाहते हैं। तथा प्रत्येक दुःखी की पुकार को सुनने वालों में सबसे अधिक तथा शीघ्र सुनने वाले हो; आपके भण्डार में अन्न, ज्ञान व यश में से किसी की कमी नहीं है। इसलिए हमारी पुकार को सुनिए, और हमें जो पापमार्ग पर ले जाना चाहता है उसका संहार कीजिए।

हम किसी भी क्षेत्र में काम कर रहे हों, असफलता हम से दूर रहे। हम से दूर रहे। असफलता का कारण बनने वाली मेरी दुर्मति अथवा मेरे सहयोगियों की दुर्मति हमसे दूर रहे। इसी प्रकार जो दुर्बुद्धि लोग हैं, जिन्हें दूसरों को दुःख देने में आनन्द आता है, जो निष्कारण ही पर पीड़ा में सुख मानते हैं—वे हमसे दूर रहें। हमसे छिपे रहें। हमारा तथा उनका कभी सामना न होने पावे।

दुर्मति जनों का यदि सामना होगा, उनकी संगति में रहने का अवसर मिलेगा तो उनके स्वभाव और चरित्र का कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ेगा। काजल की कोठरी में कैसो ही सयानो जाए, कुछ न कुछ तो कालिख लगेगी ही। इसलिए आप ऐसी कृपा करें कि हमें कभी दुष्ट जनों से वास्ता ही न पड़े।

इसी प्रकार हमारे मन में कभी दुर्मति उत्पन्न न हो। हम किसी के प्रति द्वेष, घृणा या हिंसा की भावना न रखे। अहंकार, अभिमान, लोभ और मोह को अन्तःकरण में प्रविष्ट न होने दें। क्योंकि यदि ये हमारे अन्दर प्रविष्ट हो गए, तो उसका असर हमारे व्यवहार और आचरण पर भी पड़ेगा। इसलिए दुष्टों की संगति और दुर्भावनाओं के विचार से सदा बचना चाहिए।

हमारे साथ जो दुष्ट व्यवहार करता है, और इस प्रकार बदले की भावना उत्पन्न करके हम में भी उसकी प्रतिक्रिया रूप दुर्भावना जगाता है, और पापी बनाना चाहता है, उसकी उस दुर्व्यवहार करने वाली मति को नष्ट कर दीजिए, किन्तु यदि उसके संस्कार दृढ़ हो चुके हों, बार-बार समझाने पर भी यदि न समझे; अपने व्यवहार को न सुधारे तो उसे नष्ट ही कर दीजिए।

हम तो आप को सर्वशक्तिमान्, शूर, नाना कृपाओं से प्रसिद्ध तथा सब ऐश्वर्यों का स्वामी और अन्तरंग रूप से अपना मानकर, पूर्णरूप से अर्पण करते हैं। जो ठीक समझे करें, जितना बढ़ाना चाहें बढ़ाए, जितना दुःख दण्ड या कष्ट देना उचित समझें, दें।

बस मेरी मति को कभी दुष्ट विकृत न होने दें। मतिस्तु मागान्ममा।

शब्दार्थ—(त्वम्) आप (अस्मयुः) हमारा भला चाहने वाले (तुविजात) बड़ी-बड़ी कृपाओं के द्वारा प्रसिद्ध (शूर) वीर तथा (इन्द्र) सब ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं। (सुश्रवस्तमः) अन्न, ज्ञान तथा कीर्ति के भण्डार तथा दुःखों की पुकार सुनने वाले हैं (श्रुणुष्व) मेरी भी सुनिए। क्या है पुकार? १. (यो अघायति तं जहि) जो मेरे साथ दुर्व्यवहार करे उसे नष्ट कीजिए। २. (यामन्) इस संसार में तथा इस जीवन में (रिष्टं) दुःख पीड़ाएं तथा (दुर्मति) दुर्भावना (अपभूतु) दूर रहें। ३. (दुर्मतिः) दुर्बुद्धि लोगों का संग भी (अपभूतु) दूर रहे।

९ मरुतों की सच्ची महिमा

प्रतं विवक्मि वक्म्योय एषां मरुतां महिमा सत्यो अस्ति ।
सचा यदीं वृषमणा अहंयुः स्थिरा चिज्जनीर्वहते सुभागाः ।।

ऋषिः—अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । देवता मरुतः । त्रिष्टुप् छन्दः । ऋक् १-१६७-७

मरुतों-प्राणों की महिमा महान् है । ऊसका जितना वर्णन किया जाय थोड़ा है । प्राणों की साधना से—संयममय जीवनयापन से मनुष्य अपने मन को शक्तिशाली बना सकता है । सबके साथ मित्रता का व्यवहार कर सकता है, सबके साथ न्याय पूर्ण बर्ताव करने में समर्थ बनता है ।

सामान्य लोक व्यवहार में मित्रता और न्याय का साथ-साथ रहना कठिन समझा जाता है, क्योंकि मित्रता में लिहाज और पक्षपात हो जाता है; इसलिए पूर्ण न्याय नहीं हो सकता । किन्तु प्राणों की यह सच्ची महिमा है कि जिसने अपने प्राणों को वश में कर लिया हैं; उसे मित्रता और न्याय को निभाने में जरा भी परेशानी नहीं होती । इस लिए यहां सबसे कठिन परिस्थिति का वर्णन है । यदि कोई मनुष्य अनेक पत्नियां रखता है तो वह उन सबके साथ समान अथवा न्यायपूर्ण व्यवहार नहीं सकता । जिससे उसे अधिक प्रेम या अंतरंगता होगी, उसके साथ उसका व्यवहार अधिक पक्षपात पूर्ण होगा ।

किन्तु प्राणों की यह महिमा है कि इनका साधक अपनी अनेक स्त्रियों के साथ भी पूण न्याय और मित्रता निबाह सकता है । उनमें से कभी किसी को अन्याय या पक्षपात के व्यवहार को शिकायत नहीं हो सकती । इसका कारण यह है कि वह मैत्रावरुणिः=प्राणा पान की साधना करने के कारण अगस्त्य (अगः पाप को त्यज्=दूर फेंक देता है) बनकर सदा धर्माचरण=न्यायपूर्ण व्यवहार में व्यस्त रहता है; तथा इसी प्रकार का व्यवहार करने वालों के साथ मेल रखता है ।

आध्यात्मिक अर्थ यह है :—अगः+त्यज्=अगस्तज्=औगस्टीज्=अगस्त्य ।

मरुतों की महिमा सच्ची है। जिसने मित्र=प्राण और वरुण=अपान की साधना की है, इन्हें अपने वश में करके जो मैत्रावरुणि बन गया है । वह कभी पाप में प्रवृत्त नहीं होगा, पापी या अपराधी व्यक्तियों से सम्बन्ध नहीं रक्खेगा और इस प्रकार अगस्त्यं पाप रहित बन जायेगा । इस व्यक्ति का मन शक्तिशाली होगा, उसके संकल्प दृढ़ होंगे, उसमें आत्मविश्वास की कमीं नहीं होगी; किन्तु इसके साथ ही उसमें अहंकार का लेश भी नहीं होगा, अहंकार को वह अपने से सदा दूर रखता है ।

इन गुणों को अपने अन्दर धारण करके, न्यायपूर्ण तथा धर्माचरण की परिस्थितियों का स्थिर रखने के लिए वह अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करता सच्चाई के लिए मरने को उद्यत इस मंत्र का देवता मरुत् बन जाता है।

परिणामत: सौभाग्य को बढ़ाने वाली, समाज में उत्पादन को प्रेरणा देने वाली स्थिर नीतियां सदा उसके साथ रहती हैं। वह देश में समुचित उत्पादन के द्वारा सर्वविध सौभाग्य के वर्धन में लगा रहता है। टूट-फूट, अन्याय या अत्याचार और विद्वेष शत्रुता को बढ़ा कर समाज में अराजकता व भ्रष्टाचार को बढ़ाने वाले लोगों से कभी हार नहीं मानता। उनसे,दृढ़ सकल्प तथा अपने किसी स्वार्थ से विरत रह कर, सदा जूझता रहता है। समाज और देश के सौभाग्य वधन के लिए अपने प्राणों की आहुति देने को तत्पर रहता है।

मरुतों (प्राणों) की यह महिमा है कि वे मर्त्य मनुष्य को मरुत् (इच्छा से दूसरों के लिए मरने को उद्यत) बना देते हैं। और ये ही व्यक्ति इतिहास में अमर-अमृत—अमर्त्य कहलाने लगते हैं।

शब्दार्थ—(एषांमरुतां) इन मरुतों की (य:) जो (सत्य:) सच्ची तथा (वक्म्य:) वर्णन करने योग्य (महिमा अस्ति) महिमा है (तं) उसका (प्रविवक्मि) प्रकर्ष रूप में वणन करता हूं। (ईंसचा) इनकी साधना से मनुष्य (वृषमणा:) शक्ति शालीमन वाला दृढ़ संकल्प आत्मविश्वासी तथा (अहंयु:) अहकार दूर करने वाला बनता है। वह सदा (सुभगा:) सौभाग्य को देने वाली (जनी:) उत्पादन की प्रेरणा देने वाली (स्थिरा:) स्थिर परिस्थितियों को (वहते) अपने साथ लिए रहता है। जैसे प्राण साधक व्यक्ति एक ही साथ सौभाग्य शालिनी प्रसविनी स्त्रियों को न्यायपूर्वक अपने साथ स्थिर रूप से रख सकता है।

१० बृहस्पति

योन: सनुत्य उतवा जिघत्नुरभिख्याय तं तिगितेन विध्य।
बृहस्पत आयुधैर्जेषि शत्रून्द्रुहेरीषन्तं परिधेहि राजन्॥ ऋक् २-३०-९

ऋषि: – गृत्समद:। देवता—बृहस्पति:।

बृहस्पति: समजंयद्वसूनि महोव्रजान्गोमतो देव एष:।
अप: सिषासन्त्स्वर प्रतीतो बृहस्पतिर्हन्त्यमित्रमर्कै:। ऋक् ६-३-७३

ऋषि:—भारद्वाजो बार्हस्पत्य:। देवता—बृहस्पति:।...

अपने अन्दर ज्ञान को भरने वाला व्यक्ति ही, दूसरों को उपदेश करने योग्य अथवा मार्ग प्रदर्शन करने में समर्थ—बड़ी-बड़ी योजनाओं, बड़े-बड़े आदर्शों, संगठनों में प्रवचन करने वाला तथा उनकी रक्षा करने वाला बृहस्पति बनता है।

बृहस्पति यद्यपि देव गुरु हैं, किन्तु उनका स्वभाव जयशील है। वह अपने शत्रुओं को मारने में आयुधों के उपयोग में संकोच नहीं करता। जो प्रकट रूप में

शत्रु बनकर उपस्थित हो गया, उस पर तो विजय प्राप्त किये बिना संतोष नहीं हो सकता, उसे मारने व समाप्त करने के लिए तो बड़े-बड़े आयुधों या साधनों को भी प्रयुक्त करने के लिए वह सदा उद्यत रहता है।

किन्तु यह बात ध्यान देने की है कि वह सदा या असमय में हथियारों का प्रयोग नहीं करता है, सामान्यता वह लोगों को अपनी स्तुतियों प्रशंसाओं द्वारा ही जीत लेता है, यह उसका स्वभाव ही है जो लोग उदासीन हैं—न उनके मित्र हैं और न ही शत्रु है उन्हें वह अमित्र नहीं बनने देता; वह उनकी अमित्रता को समाप्त कर देता है। उसका निरन्तर यह प्रयत्न रहता है कि ये अमित्र उसके शत्रु न बनने पावे; मित्र बनें। इसके लिए वह आवश्यकतानुसार इन उदासीन व्यक्तियों या राष्ट्रों की प्रशंसा करता है, उनके साथ उनके पक्ष में अपना मत देता है और संकट के समय उन्हें अन्न की तथा धन की भी सहायता करता है।

इस प्रकार का बृहस्पति व्यक्ति केवल उपदेश ही नहीं देता, बातें ही नहीं बनाता रहता अपितु सदा कर्मों में लगा रहता है। नये-नये प्रकाश को प्राप्त करने के लिए अप्रतिम प्रयत्न करता है। उसकी कथनी और करनी में भेद नहीं होता।

मन, वचन, कर्म में जो समान है, वह आत्मविश्वासी तथा सन्तोषी होता है। उसे परमेश्वर में विश्वास होता है। वह विजय में परमेश्वर की कृपा और पराजय में अपनी कमी देखता है। परिणामतः सदा प्रभु के गुण गाने मे लगा रहता है। जो स्थिति आए उसे प्रभु का विधान समझकर उसमें सन्तुष्ट रहता है, मस्त रहता है। यही व्यक्ति 'गृत्समद' कहाता है। गृत्समद बने बिना बृहस्पति बनना कठिन है।

हम अल्पज्ञ हैं। अपने प्रत्यक्ष शत्रु को देख सकते हैं। हमें जो मारने के लिए आ रहा है, उससे बच सकते हैं। किन्तु जो छिपकर हम पर आक्रमण करना चाहता है, जो मन में हमारे विरुद्ध योजनाएँ बना रहा है, उसे हम नहीं पहिचान पाते।

आप सर्वज्ञ हैं। हमारे मित्र हैं। इसलिए आपसे प्रार्थना करते हैं कि जो छिपकर हमारी हिंसा करना चाहता है, या हमें झूठ मूठ बदनाम करना चाहता है, आप उसे अपने अमोघ अस्त्र से बींध दें जो हमसे द्वेष रखता हो, उससे आप द्वेष करें, उसे समाप्त कर दें।

जो हमारे मित्र हैं या उदासीन हैं उन्हें आप यथेष्ठ धन दें, अन्न दें। गौओं से भरपूर गोष्ठ दें, जिससे उन्हें दूध, दही, घृत की कमी न रहे। उनकी प्रजाएँ ज्ञानी बने।

शब्दार्थ—(एषः देवः बृहस्पतिः) यह बृहस्पति देव (अप्रतीतः) अप्रतिम है, अपने कृपा भाजनों को (वसूनि समजयत्) खूब धन देता है (गोमतो महोव्रजान्) गौ बैलों से भरे हुए बाड़े अथवा ज्ञानयुक्त कर्मठता देता है (अपः) कर्म तथा जल (स्वः) प्रकाश तथा सुख देता है और (अमित्रम्) अपने उदासीन व्यक्ति को मित्र बनाने की इच्छा से (अर्कैः) उपदेश-सलाह-प्रशंसा तथा अन्न के द्वारा (हन्ति) उसकी उदासीनता को समाप्त कर देता है। वह (शत्रुन् आयुधैः जेषि) शत्रुओं को आयुधों के द्वारा जीतता है। इसलिए हमारी प्रार्थना है कि जो (सनुत्य) छिपाकर (जिघत्नुः) हमें मारना चाहता है या (अभिख्याय) बदनाम करना चाहता हैं उसे आप (तिगिने)

अमोघ अस्त्र से (विध्य) बींध दें। (रीषन्तम्) हमारी हिंसा चाहने वाले को (द्रुहे धेहि) आप द्रोह करने लगे।

(गृत्समदः) सदा परमेश्वर की स्तुति करने वाला तथा, जो मिल जाए उसमें सन्तुष्ट होकर मस्त रहने वाला। (भरद्वाजः) ज्ञान-बल या अन्न को अपने में भरकर इनके द्वारा दूसरों का भरण पोषण करने वाला (बृहस्पतिः) बड़े-बड़े लोगों तथा लोकों की रक्षा करने वाला। ज्ञान-उपदेश तथा सलाह द्वारा बने उपर्युक्त बृहस्पति की सन्तान (बार्हस्पत्यः)।

गृणाति—इति गृत्सः। माद्यति—इतिमदः।

११ अग्नि और हविः

अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन्।
अर्कस्त्रिधातूरजसो विमानः अजस्रो घर्मो हविरिस्म नाम॥

ऋक् ३-२६-७

ऋषि—आत्मा। देवता—आत्मा अग्निर्वा।.....

मैं सतत् प्रगतिशील हूँ क्योंकि मैं बुद्धिजीवी एवं श्रीमन्तों के घर में उत्पन्न हुआ हूँ, मेरी आँख में दीप्ति है जो प्रत्येक को आकर्षित करती है; मेरे मुख में मधुर वाणी का अमृत है। मैं किसी के प्रति द्वेष नहीं रखता, किसी से कटु नहीं बोलता। इसलिए लोग मेरी बात का आदर करते हैं। मैं जिस क्षेत्र में कर्म करता हूँ उसका निर्माण करता हूं। तीनों प्रकार के दोषों को दूर करता हुवा—

अपने 'शरीर' मन और आत्मा को धारण करने में सदा प्रयत्नशील रहता हूँ। इसलिए मैं ही वास्तव में भोक्ता तथा कर्ता (अग्निः) हूँ।

जिस कुल में उत्पन्न हुआ हूं, वहाँ धन मान, यश किसी वस्तु की कमी नहीं है, इसलिए यदि मैं सतत गतिशील आत्म स्वरूप को छोड़ कर, प्रमाद वश केवल भोगों में रमने लगूं, तो मैं भोक्ता न रहकर भोग्य (हविः) मात्र रह जाता हूं। उस समय भर्तृहरि के शब्द (**भोगा न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः**) हमने भोगों को नहीं भोगा, बल्कि भोगों ने हमें भोग लिया—सही उतर जाते हैं।

इसलिए मैं दृढ़ निश्चय करता हूं कि मैं जिन **जात वेदाः** अर्थात् धीमान् और श्रीमान् लोगों के कुल में उत्पन्न हुआ हूं, उसी परम्परा के अनुसार सदा क्रियाशील बनूंगा। अपनी दृष्टि को ज्ञान ज्योति से दीप्त रखूंगा अपने मुख में अमृत धारण करूंगा। अपने से बड़ों के प्रति पूज्य भाव रखूंगा अपने चारों तरफ के तीनों प्रकार के अभाव को दूर कर प्रत्येक क्षेत्र में विशिष्ट निर्माण करता हुआ, सदा सूर्य की की तरह निरन्तर प्रकाश को प्रवाहित करने वाला बना रहूंगा। कभी निराश नहीं होऊंगा। समाज में जो कमियां आएंगी वे चाहे ज्ञान की कमी से आएं, धन की कमी से आएं या शक्ति की कमी से आएं—उन्हें दूर करने का प्रयत्न करूंगा। मेरा कर्त्तव्य कर्म करना है, फल की मुझे परवाह नहीं है।

यदि लोग मेरी बात पर ध्यान नहीं देंगे, समाज को दूषित करने वाली प्रथाओं को दूर नहीं करेंगे, समाज में व्याप्त अनैतिकता को समाप्त करने में सहायक नहीं होंगे तो मैं चुप होकर नहीं बैठ जाऊंगा अथवा समाज को छोड़कर कहीं वन—पर्वत पर नहीं चला जाऊंगा; अपितु उस देश और समाज को, अपनी मातृभूमि को जिसके नानाविधि उपकारों द्वारा मैं अत्यन्त ऋणी हूं, सुधारने के लिए, अग्रसर करने के लिये, विश्व कीदृष्टि में पूज्य बनाने के लिए अपने इस व्यक्तित्व को हवि: बनाकर होम कर दूंगा।

अपने वैयक्तिक लाभ के लिए, क्षणिक-मान के लिए अथवा अल्पकालिक यश के लिए कभी देश के हितों का बलिदान नहीं करूंगा। अपनी मातृभूमि के लिए जीते हुए और मर कर भी प्रकाश ही देता रहूंगा।

शब्दार्थ—(जन्मना) जन्म से (जातवेद:) ज्ञान और धन युक्त (अग्नि:) गतिशील कर्त्ता तथा भोक्ता (अस्मि) हूं। (घृतं मे चक्षु:) मेरी दृष्टि घृत की तरह दीप्त तथा स्निग्ध है। (मे आसन् अमृतम्) मेरे मुख में अमृत है; परिणामत: मैं (अर्क:) बड़ों का पूजक तथा छोटों द्वारा पूजनीय (त्रिधातु:) तीनों प्रकार से रक्षा करने वाला (अजस्र: धर्म:) निरन्तर प्रवाहित होने वाले प्रकाश से युक्त (रजसो विमान:) प्रत्येक लोक या क्षेत्र के निर्माण में सदा लगा रहने वाला हूं। यदि स्थिति खराब हो, लोग मेरी बात न सुनें तो अपने देश के लिए (हवि: अस्मि) हवि बनकर अपनी आहुति देने को उद्यत हूं।

वेद में ऐसे मन्त्र बहुत कम हैं, जिनका ऋषि तथा देवता एक ही हो। इस मन्त्र का ऋषि भी आत्मा है। और देवता भी आत्मा है। आत्मा शब्द से जीव और परमात्मा दोनों का ग्रहण होता है।

देवता बनने के लिए प्रथम ऋषि बनना होता है। जब तक मनुष्य अपने आप को नहीं जान लेता, तब तक वह परमात्मा को भी नहीं जान सकता। जब तक अपनी उन्नति नहीं कर लेता तब तक समाज या देश की उन्नति भी नहीं कर सकता। पिण्ड में संकुचित आत्मा को जाने बिना ब्रह्माण्ड में व्याप्त आत्मा को जानना संभव नहीं है। शरीर में स्थित आत्मा को जानकर उसकी उन्नति करने के बाद ही समाज में व्याप्त आत्मा की आवश्यकताओं को अनुभव किया जा सकता है, और कमियों को दूर करके समाज को उन्नत बनाया जा सकता है।

आत्मा यदि गतिशील बनी रहती है, तो वह अग्नि है। जिस प्रकार अग्नि अपने में पड़े पदार्थों को खा जाती है, वह भोगों को सच्चे अर्थों में भोगता हुआ भोक्ता बना रहता है। किन्तु यदि आत्मा गतिशील न बनकर भोगों में रम जाए तो वह तो समझता है कि मैं भोग भोग रहा हूं पर वास्तव में वह भोग्य बन जाता है, भोग उस को खा जाते हैं।

दूसरी ओर प्रबुद्ध आत्मा (आत्मा को पहिचानने वाला आत्मज्ञानी) समाज को ठीक मार्ग पर लाने के लिये, समाज की बुराईयों को दूर करने के लिए अपने जीवन को हवि: बना देता है, अपने जीवन का हवन कर देता है, आत्मबलिदान कर देता है। अपनी आत्मा को परम-आत्मा के लिए उत्सर्ग कर देता है।

अग्नि (भोक्ता) से भोग्य (हवि:) बनने की अवस्था अवनति है। और अग्नि (भोक्ता) से ऊपर उठकर समाज में व्याप्त परम-आत्मा के लिए अपने जीवन को हवि: (आहुति) बनाने की अवस्था उन्नति है।

१२ विश्वामित्र-इन्द्र

महो महानि पनयन्त्यस्येन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि।
वृजनेन वृजिनान्त्सपिषेष मायाभिर्दस्यूंरभिभूत्योजाः ।।

ऋषिः विश्वामित्रः। देवता-इन्द्रः। ऋक् ३-३३-६

ऐश्वर्यशाली वह है, जिसके ऐश्वर्य की लोग प्रशंसा करते है, जिसके गुणों और ऐश्वर्य से आकर्षित होते हैं और जिसके ऐश्वर्य की कामना करते है। किसी के पास कितना ही ऐश्वर्य हो, किन्तु यदि वह किसी के काम नही आता, तो उसका कुछ लाभ नहीं। उसे कोई जानता नहीं। वह धनपति हो सकता है, किन्तु इन्द्र नहीं हो सकता।

इन्द्र बनने के लिये दूसरों का भला करना, अपने से भिन्न तथा अभावग्रस्त जनों के दुःखों अभावों तथा अज्ञान को दूर करना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में सब के प्रति मित्र भाव रखना ही इन्द्र बनने का एक मात्र उपाय है। जो जितने अंशों में दूसरों का मित्र है, वह धन सम्पत्ति शून्य होते हुए भी उतने अंशों में इन्द्र है। और जो व्यक्ति मनुष्य मात्र अथवा प्राणिमात्र का मित्र है—विश्वामित्र है, वही पूर्णरूप से इन्द्र बनने का अधिकारी है।

इस इन्द्र का कर्म महान् होता है। वह अपना हृदय सदा विशाल रखता है। उसमें संकुचितता, स्वार्थ या छोटी-छोटी परिधियां नही होती। वह सबको मित्र की दृष्टि से देखता है। सबका भला चाहता है। अपने शत्रु का भी हित करता है। किन्तु क्योंकि वह विश्वामित्र है, सबका हित चाहता है, इसलिये अधिक लोगों के प्राणियों के हित के लिये एक व्यक्ति को दण्ड देना पड़े, कष्ट हो तो उसकी परवाह नहीं करता। बहुत बार तो उसके व्यापक दृष्टिकोण को न समझने वाले लोग उसे क्रूर या अन्यायी भी कहने लगते हैं। किन्तु वह इनकी परवाह न करके बहुजन हित को ध्यान में रखता है, अधिक प्राणियों के सुख को देखता हैं, दीर्घ कालीन सुख के लिये क्षणिक सुख का त्याग कर देता है। प्रसंगवश यह भी स्मरण रखना चाहिए कि शरीर के अंगों में लोकों की कल्पना करते हुए हृदय स्थान को महः लोक कहा गया है। अर्थात् कोई व्यक्ति, ज्ञान बल या धन की महत्ता प्रचुरता से महान् नहीं बनता। महान् बनने के लिये हृदय की विशालता आवश्यक है।

इन्द्र का एक ही कर्म महान् नहीं है। उसके तो बहुत बल्कि सभी कर्म हैं, जिन्हे हम महान् कह सकते हैं। उसने हमारे लिए जल व वायु बनाया है। समुद्र और पर्वत बनाए हैं। सूर्य और चन्द्र का निर्माण किया है। रात व दिन का भेद रक्खा है। अच्छे और बुरे में से किसी को भी चुनने की स्वतन्त्रता दी है।

मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है, किन्तु फल भोगने में परतन्त्र है। यदि वह अच्छा कर्म करेगा, तो शुभफल मिलेगा। बुरा कर्म करेगा—बुरी भावना रक्खेगा—वृजिन बनेगा, तो उस इन्द्र के पाश से छूट कर नहीं जा सकता। वृजिन व्यक्ति पर वह दया या कृपा भी नही करता। जो दूसरों का जितना बुरा करेगा। दूसरों के प्रति जितनी बुरी भावना रक्खेगा, उतना ही उसे कष्ट और दुःख भोगना पड़ेगा।

इन बुरे कर्मों व बुरी भावनाओं के फलस्वरूप यदि आवश्यकता होगी, तो वह सच्चा इन्द्र इसे पीस कर रख देगा। इसने अनेक शुभ कर्म किये होंगे तो उनका शुभ फल मिलेगा। किन्तु यदि एक बड़ा पाप कर दिया तो उसके फल स्वरूप दुःखों की चक्की में पिसना भी पड़ेगा। असि दात्रस्य दाता। ऋ० ६।७-५५।

वह अपार बल से युक्त है। उसे अपना बल प्रदर्शन करने के लिये हाथ पैर की जरूरत भी नहीं। उसके तेज के आगे कोई टिक नहीं सकता। उसका बल और दण्ड अमोघ है। कोई चाहे द्युलोक को लांघकर उससे भी परे चला जाए तो भी बच नहीं सकता। उतयो धामतिसपोल्परस्ता तान समुच्यातैवरुणस्यराशः।

कुछ लोग दूसरों को दुःख देते हैं, साथियों और पड़ौसियों को परेशान करते है। अपने अधीनस्थजनों को उनके परिश्रम का पूरा प्रतिफल नही देते। ये सब दस्यु हैं। ये अपने को शक्तिशाली, किसी तरह कानून के चंगुल में न फंसने वाला, बहुत चालाक व बड़ा धूर्त्त समझते हैं। किन्तु ये नहीं जानते कि वह इन्द्र प्रत्येक गुण की चरम सीमा है। ये अपने को वंकु=बांका=टेड़ा मानते हैं, किन्तु वह धूर्तों को भी धूर्व करने वाला धूः नष्ट करने वाला है।

जब यह दस्युओं को दण्ड देने लगता है। तब यह सामान्य अल्पज्ञ मनुष्य के नीति शास्त्र के अनुसार नहीं चलता। तब वह सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् सर्वव्यापक इन्द्र के नीतिशास्त्र के अनुसार शासन व्यवस्था करता है।

सामान्य लोग जिसे छल, कपट या माया कहते हैं, यह उसका आश्रय लेकर दस्यु और वृजिन जनों को पीसकर रख देता है। उन्हें बिल्कुल समाप्त कर देता है।

जिसे हम अल्पज्ञता के कारण छल या कपट मानते हैं। वही सर्वज्ञता के कारण इसका ज्ञान बुद्धि है। इसलिये कभी अन्याय या अनैतिकता का तो प्रश्न ही नहीं उठ सकता।

उस इन्द्र की यही तो महिमा है कि जो दस्यु अपने को दुर्दान्त और अजेय समझकर कल दूसरों को सताता हुआ अकड़ा फिरता था, वह आज मरा पड़ा है। उसको याद करने वाला, उसकी सहायता करने वाला, उसके साथ जाने वाला आज कोई नहीं है

उसकी माया वही जानता है। वह माया कब छल कपट का रूप ग्रहण कर लेती है(व्यक्ति के व्यवहार में) और कब ज्ञान बुद्धि और न्याय बन जाती है। (इन्द्र के दण्ड रूप में); इसका वास्तविक विवेक भी वही कर सकता है। सो अद्धावेद।

शब्द र्थ — (विश्वामित्रः) सबके साथ मित्रता का व्यवहार करने वाला, सबका हित चाहने वाला व्यक्ति ही (इन्द्रः) सच्चे अर्थों में इन्द्र=ऐश्वर्यशाली कहाने योग्य है। (अस्य इन्द्रस्य) इस इन्द्र का (कर्म) कर्म (महः) महान् है। इसके (पुरूणि) बहुत से (सुकृता) उत्तम कर्म-विश्व के हित के लिये किये गए कर्म (महानि) बड़े महान् है। व्यापक हितको ध्यान में रखकर यह (वृजिनान्) पाप भावनाओं का पोषण करने वाले पापयुक्तजनों को (वृजनेन) बले=बलपूर्वक (संपिपेष) अच्छी तरह से पीसकर समाप्त कर देता है। (अभिभूत्योजाः) शत्रुओं को पराजित-अभिभूत करने वाले तेज से युक्त यह (दस्यून) दूसरों को कष्ट देने वाले या समाज को नुकसान पहुंचाने वाले दस्युओं को (मायाभिः) सर्वज्ञता के कारण अपने अमोघ ज्ञान साधनों के द्वारा, किन्तु हमारी अल्पज्ञता के कारण हमारी दृष्टि में छलकपट द्वारा (संपिपेष) खूब अच्छी तरह पीसकर रख देता है।

१३ परमात्मा किन का सखा व अतिथि बनता है

यस्त्वा स्वश्वः सुहिरण्यो अग्ने उपयाति वसुमता रथेन ।
तस्य त्राता भवसि तस्य सखा यस्त आतिथ्यमानुषग्जुजोषत् ॥

ऋषिः—वामदेवः । देवता अग्नी रक्षोहा —ऋक् ४-४-१०

आप प्राणीमात्र के सखा और रक्षक हैं । प्रत्येक की उन्नति चाहते हैं, उत्कर्ष के लिए मार्गदर्शन करते हैं । मित्र की तरह कष्टों से रक्षा करते हैं; रोगों और दोषों को नाश करते हैं, सब प्रकार की पाशों और बन्धनो से मुक्त करके व्यक्ति को अपने सदृश बनाना चाहते हैं और प्रत्येक व्यक्ति के पास अतिथि बनकर रहना चाहते हैं । जिस व्यक्ति के घर में राजा अतिथि बन जाए—उसका क्या कहना है ? सारी प्रजा उसे धन्य समझती है, उसे विशिष्ट समझ उसका साथ चाहती है, उसे प्रसन्न करना चाहती है, उसकी इच्छाओं को पूरा करके उसका कृपा भाजन बनना चाहती है ।

किन्तु वह प्रभु सर्वज्ञ है । सबके मन की बात को जानते हैं । उन्हें कोई धोखा नहीं दे सकता, वह ऊपरी क्रिया से प्रभावित नहीं होते । जो व्यक्ति अपने मन को उनके अनुकूल बनाकर उनका आतिथ्य करने के लिए सदा उनकी तथा उनकी सृष्टि की, उनकी प्रजा—प्राणीमात्र की प्रीतिपूर्वक सेवा करता है । वह उसी के मित्र बनते हैं, उसी का आतिथ्य स्वीकार करके उसके हृदय में प्रगट होते हैं । उसकी रक्षा करते हैं; उसे आने वाले कष्टों, रोगों तथा मानसिक दुःखों का निवारण करने की शक्ति देते हैं । उन आपत्तियों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । सामान्य जन को दीखता है कि प्रभु के भक्त पर कष्ट आए हुए हैं, किन्तु उस भक्त को वे कष्ट अनुभव ही नहीं होते । वह तो इन परिस्थितियों को अपनी उन्नति के लिए प्रभु द्वारा दिये गए अवसर समझता है । इन अवसरों से पूरा लाभ उठाने का प्रयत्न करता है, अपने को परमेश्वर की दुःखी सन्तानों का तप हरकर, उनका आतिथ्य पूर्ण करता है ।

किन्तु दूसरों की सेवा वही कर सकता है, जिससे स्वयं किसी की सेवा की आवश्यकता न हो । दूसरों के रोगों का वही इलाज कर सकता है जो स्वयं रोगरहित स्वस्थ हो और रोगों को दूर करने के उपाय जानता हो । दूसरों के कष्टों और अभावों को वही दूर कर सकता है, जिसे स्वयं कष्ट सहन का अनुभव न हो, जिसके पास किसी प्रकार का अभाव न हो । जिसके पास स्वयं ज्ञान नहीं, वह दूसरों के अज्ञान को क्या दूर कर करेगा । जिसके पास स्वयं शक्ति नहीं, वह दूसरों की असहाय अवस्था में क्या सहायता करेगा ? जिसके पास स्वयं धन नहीं वह गरीबी में दूसरों की क्या सहायता करेगा ?

जिसके पास ज्ञान, सामर्थ्य या धन में कुछ भी नहीं, जिसका घर टूटा-फूटा है, जिसके पास सवारी शीघ्रगामी और सुन्दर नहीं, जिसके पास हिरण्य धन नहीं, उसके पास पुरुष महान्तं=महत्वपूर्ण व्यक्ति, नेता या राजा किस तरह अतिथि बन सकते हैं ?

इसलिए जिसकी इन्द्रियाँ या अश्व उत्तम तथा शीघ्रगामी हैं। ये इन्द्रियाँ ही ज्ञान का साधन हैं, इसलिए जिसके ज्ञान साधन सुन्दर उत्तम तथा पूर्ण हैं जिसके पास वीर्य या सुवर्ण सुंदर उपायों से एकत्रित किया गया है, तथा हितकर कर्मों में व्यय किया जाता है। वीर्य ही स्थिर अंतः सामर्थ्य को उत्पन्न करने का कारण है। और सुंदर तथा उत्तम तरीकों से कमाया हुवा धन ही परोपकार तथा हितकारी कर्मों में लगाया जाता है। जिसका शरीर उत्तम गुणों तथा शक्तियों को धारण करने में समर्थ हैं, अथवा देवताओं (स्वस्थ इन्द्रियों) को अपने में धारण करके इधर-उधर दूसरों की सेवा के निमित्त गति कर सकता है। वही व्यक्ति वामदेव कहाता है।

वामदेव की इन्द्रिया स्वस्थ तथा सुन्दर हैं। वामदेव का घर धन-धान्य से पूर्ण है। वामदेव के यहाँ बड़े से बड़ा व्यक्ति बड़ी से बड़ी आवश्यकता लेकर आए उसका पूरी तरह से आतिथ्य होता है। उसके वामदेव के यहाँ गरीब से गरीब व्यक्ति किसी भी अभाव से ग्रस्त होकर आए, वह उसके हितकी साधना में फौरन तत्पर रहता है। आगे बढ़कर उसके कष्टों का विनाश करता है अर्थात् सदा रक्षा हो अग्नि बनने के लिए उद्यत रहता है।

भावार्थ—मनुष्य पहिले स्वस्थ बने, अपने शरीर और इन्द्रियों को समर्थ बनाए। उत्तम ज्ञान प्राप्त करे, धन कमाए, परमात्मा को अपना अतिथि बनाए। तो परमात्मा सखा बनकर उसके सब दुरितों व कष्टों को दूर करके उसका पूर्णरूप से रक्षक बनेगा।

शब्दार्थ—(यः) जो व्यक्ति (स्वश्वः) उत्तम इन्द्रियो वाला, उत्तम सामर्थ्य वाला (सुहिरण्यः) उत्तम ज्योति, उत्तमवीर्य उत्तमधन वाला (वसुमता) दूसरों को बसाने की भावना वाले (रथेन) शरीररथ या वाहन द्वारा (अग्ने) सबको आगे ले चलने वाले प्रभो (त्वा) आपके पास (याति) जाता है तथा (ते) तेरी अनुकूलता में रह कर निरन्तर (आतिथ्यम्) आतिथ्य को (जुजोषत्) प्रीतिपूर्वक सच्चे हृदय से करता है (तस्य) उसका तू (सखा) मित्र तथा (त्राता) रक्षक (भवसि) बनता है।

अपने घर में

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

लाकर : वेद मन्दिर बनाएं

आलोकित हो जब जग सारा

शब्द-शब्द हो तुम्हें समर्पित
जीवन का हर क्षण अर्पित
ऐसी शक्ति मुझे मिल जाए
कार्य पूर्ति हित जीवन जाए

दया तुम्हारी पाए यह मन
तेरे कार्य हित अर्पित निज तन
अभिलाषा निज उर में धारी
तुझे समर्पित मेधा सारी

पथ के कंटक फूल लगें फिर
धाराएँ भी कूल लगें फिर
वेद ज्योति जग में फैलाते
तेरी कीर्ति कथा हम गाते

तेरा ऋण कुछ भी चुक जाए
जीवन अमर सुफल पा जाए
इतनी शक्ति मुझे दे दाता
जो हर जन का ही है त्राता

यही प्रार्थना यही कामना
यही हृदय की एक भावना
हमने जो हैं दीप जलाए
सत्य-ज्ञान ज्योति बिखराए

जन-जन बन विकास में भागी
हो उन्नति पथ का अनुरागी
सकल विश्व में प्रेम प्रसारें
तेरी भावना उर में धारें

ज्ञान दीप दे ज्योति निराली
मिटे शुष्कता हो हरियाली
तेज ओज का हो आराधन
बने सकल वसुधा ही पावन

जो तेरी थी सदा कामना
गिरतों को है हमें थामना
उसकी पूर्ति हेतु हो तत्पर
तेरे मार्ग पर चलकर सत्वर

अपना जीवन स्वयं संवारें
शुचि सकल्प यही उर धारें
तब होगा प्रण पूर्ण हमारा
आलोकित हो जब जग सारा

—कु० आर्भा

वैदिक साहित्य

१. ऋग्वेद (१-१० मंडल) सम्पूर्ण	मूल्य १२५ रू०
२. यजुर्वेद-सामवेद भाष्य, महर्षि दयानन्द सरस्वती— आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री	७१)
३. अथर्ववेद भाषा भाष्य	७१)
४. चारों वेद आर्ट पेपर प्रत्येक का मूल्य	१५१)
५. वेदों का यथार्थ स्वरूप	१०)
६. यजुर्वेद भाष्य	२५)
७. सामवेद (आध्यामिक भाष्य)	२५)
८. अथर्ववेदीय मंत्र विद्या	७)
९. अथर्ववेद परिचय	५)
१०. अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र स्वामी ब्रह्ममुनिजी	१०)
११. वैदिक सत्संग पद्धति	६५पैसे
१२. वैदिक अर्थनीति – सातवलेकर जी	४० पैसे
१३. क्या वेद में मांसभक्षण का विधान है ?	१)
१४. वेद और बाइबिल	१)
१५. मोक्ष का वैदिक मार्ग	१)
१६. वैदिक सिद्धान्त [पं० यशःपाल]	३)
१७. वेदामृत (सजिल्द) पं० सातवलेकर	८)-१०)
१८. शतक-त्रयी	१रु० ५० पैसे
१९. ईशोपनिषद [महात्मा नारायण स्वामी]	१)
२०. उपनिषद्त्रयी	१)५०
२१. शतपथ ब्राह्मण (प्रथम खण्ड) स्वामी समर्पणानन्द जी	२५)
२२. बृहस्पति राजधर्म सूत्र	१)
२३. जन-ज्ञान का शताब्दी विशेषांक (सजिल्द)	१०)

आध्यात्मिक साहित्य

२४. गायत्री शतक [१०० गायत्री मंत्रों का भाष्य]	२ रु०
२५. ईश्वर भक्ति [स्वामी सर्वदानन्द जी]	१)५० पैसे
२६. माँ गायत्री, गायत्री महत्व पर अनमोल ग्रन्थ	१)५०
२७. धर्म का मार्ग—सुरेशचन्द्र विद्यालंकार	१)
२८. अमृतपथ (सजिल्द)	५)
२९. आध्यात्मयोग (सजिल्द)	६)
३१. कल्याण मार्ग	२५ पैसे
३१. यज्ञ प्रसाद (महात्मा आनन्द स्वामी)	६० पैसे
३२. संक्षिप्त महाभारत	१०)
३३. उपनिषद कथा माला (महात्मा नारायण स्वामी)	१)
३३अ वेद ज्योति	(अजिल्द) ४), सजिल्द ६)

महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ

३४. सत्यार्थ प्रकाश

१. शताब्दी संस्करण—पुस्तक साइज	३)
२. प्रचार संस्करण—बड़ा साइज़	४)
३. राज संस्करण—बड़ा सजिल्द	६)
४. उपहार संस्करण—कपड़े की जिल्द	८)
५. मोटे अक्षर का बड़ा सुनहरी जिल्द	५१)
६. सर्वश्रेष्ठ आर्ट पेपर पर	१०१)

३५. संस्कार विधि : महर्षि दयानन्दकृत

१. बड़ा साइज सजिल्द	६)
२. बड़ा साइज अजिल्द	४)
३. छोटा साइज अजिल्द	३)
४. छोटा साइज सजिल्द	४)
३६. व्यवहार भानु:	६० पैसे
३७. स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश	२० पैसे
३८. मूर्ति पूजा की हानियाँ	२० पैसे
३९. आर्योद्देश्यरत्नशाला	२० पैसे

स्वामी दयानन्द व आर्य समाज सम्बन्धी साहित्य

४०. स्वामी दयानन्द जीवन चरित्र (अजिल्द)	२)
४० अ—स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र (सजिल्द)	४)
४१. स्वामी श्रद्धानन्द	१)
४२. ज्योति स्तम्भ [आर्य नेताओं के सचित्र जीवन चरित्र]	६)
४३. आर्य क्रान्तिकारी	३)
४४. विश्व को आर्यसमाज का सन्देश	३० पैसे
४५. बोध रात्रि (महाकाव्य)	६)
४६. गीत मंजरी (नया तीसरा संस्करण)	२)५०

प्रचार पुस्तिकाएं

४७. आर्यसमाज क्या मानता है ?	२० पैसे
४८. श्रद्धांजलियाँ	१)५० पैसे
४९. महर्षि दयानन्द की विशेषताएं	२० पैसे
५०. आर्यसमाज की विचारधारा	२० पैसे
५१. आर्यसमाज की मान्यताएं	२० पैसे
५२. विश्व को वेद का संदेश	२० पैसे
५३. आर्यसमाज के दस नियम (व्याख्या सहित)	२० पैसे
५४. निमन्त्रण आर्यसमाज का	२० पैसे
५५. आर्यसमाज के १०० वर्ष	२० पैसे
५६. सुख का मार्ग	२० पैसे
५७. आर्य कौन ?	२० पैसे
५८. वेद महिमा	२० पैसे
५९. स्वास्थ्य का महान शत्रु—अंडा	२० पैसे

५९अ स्वामी जी की जीवनी २० पैसे उपनयन का महत्व २० पैसे

अन्य उपयोगी साहित्य

६०. ऋषि दयानन्द ने कहा था	१)५० पैसे
६१. योगेश्वर कृष्ण	६० पैसे
६३. आदर्श सुधारक दयानन्द	६० पैसे
६४. दयानन्द चित्रकथा	५० पैसे
६५. चार फल	३० पैसे
६६. योग की राह पर	२५ पैसे
६७. वैदिक ज्ञान सुधा	१)
६८. पतञ्जल योगशास्त्र	१)
६९. भारत की अवनति के सात कारण	६० पैसे
७०. शक्ति का रहस्य	१)५०

अंग्रेजी साहित्य

71—Light of Truth	Rs. 20.00
72—Life and Teachings of Swami Dayanand	Rs. 25.00
73—An Introduction to the commentaryon the Vedas Paperbound Rs. 10.00 Cloth bound	Rs. 12.00
74—Teachings of Swami Dayanand	Rs.1.50
75—Ten commandments	Rs. 1.50
76—Message of the Arya Samaj to the Universe	Paise. 50
77—Vedic—Prayer	Rs. 4.00
78—Dayanand the Great	Paise. 0.20
79—An Introduction to the Arya Samaj	Paise. 0.20
80 Bible in the Balance	Paise. 20
81—A Challenge to the Christian Faith	Paise. 0.10
82—Vedic Life	Rs. 4.00
83—Christianity and Vedas.	Rs. 2.00
84—What is yoga ?	Paise. 0.20
85—Man and his Religion	Rs. 1.50
86—A short life of Swami Dayanand Saraswati	Rs. 2.00
87—The Great Gayatri	Paise. 0.25
88—Vedic Fundamentals	Rs. 5.00
89—Essence of Vedic Religion	Paise. 0.20
90—The Fundamentals of the AryaSamaj	Paise 0.20
91—Whose wealth ?	Rs. 10.00
92—Dayanand's Outline of Vedic Philosophy— Cloth bound	Rs. 15.00
93—Yoga of Patanjali	Rs. 1.00
94-95—Ramayana	Rs.3.00
95—Agnihotra	Rs. 10.00
96—Krsishnayan	Rs. 1.00
97—Nectareal songs of the Vedas	Rs. 5.00

97A—Universal Patriotism Rs. 2.00

९८. प्रार्थना सुमन १)
९९. वन्दना के स्वर १५)
१००. ब्रह्मकुमारी मत समीक्षा २५ पैसे
१०१. सत्संग महिमा स्वामी वेदानन्द तीर्थ ४० पैसे
१०२. वैदिक संध्या २० पैसे
१०३. वैदिक डायरी (१९७७) सजिल्द ६)
१०३(अ) सत्यनारायण कथा ३० पैसे

ईसाइयत सम्बन्धी हिन्दी साहित्य

१०४. पोप की सेना का भारत पर हमला २० पैसे
१०५. बाइबिल की चुनौती ३० पैसे

नवीन साहित्य

१०७. भाई परमानन्द : बनारसीसिंह जीवनी २)
१०८. श्रीमद्दयानन्द प्रकाश—स्वामी सत्यानन्द लिखित सजिल्द ८) अजिल्द ६)
१०९. बाल सत्यार्थ प्रकाश (स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती) २)५०
११०. स्वर्णपथ स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती १)५०
१११. धरती का स्वर्ग : गृहस्थाश्रम—पं० शिवकुमार शास्त्री M.P. १)५०
११२. उपदेश मंजरी (स्वामी दयानन्द सरस्वती) मूल्य २)
११३. आर्याभिविनय (काव्यमय व्याख्या) १)५०
११४. महान् दयानन्द (पं० शिवदयालु जी) १)५०
११५. प्रभु के चरणों में—पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार १)५०
११६. आदर्श परिवार ६० पैसे
११७. धर्मसार स्व० पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय १)
११८. वैदिक धर्म ही क्यों ? (महात्मा नारायण स्वामी) १)४०
११९. आर्यसमाज के आधार स्वामी सत्यानन्द जी १)५०
१२०. महर्षि दयानन्द का ऐक्यवाद—राजेन्द्र जिज्ञासु ५० पैसे
१२१. दयानन्द चित्र दर्शन : सचित्र सजिल्द एलबम ५ रंगों में छपा २०)
१२२. वेदाञ्जली—वैदिक विनय के तीनों भाग १५)
१२३. गीताभाष्य—पं० आर्यमुनि जी १५)
१२४. महर्षि दयानन्द के ऐतिहासिक संस्मरण १)

कमीशन के नियम

१. २५) तक के साहित्य पर कमीशन नहीं दिया जाएगा।
२. २६) से ५०) तक के साहित्य पर १० प्रतिशत कमीशन।
३. ५१) से १००) तक २० प्रतिशत।
४. १०१) से अधिक पर २५ प्रतिशत।

आदेश का १।४ धन अग्रिम भेजें।

रेलवे स्टेशन लिखें : प्रेषण रेल डाक आदि व्यय पृथक्

जनज्ञान (साप्ताहिक) के सदस्य बनिये

वार्षिक मूल्य २०) आजीवन ३०१)

नमूना पत्र लिखकर मंगाएं

—केशवानन्द

आजादी के दीवाने--मदनलाल ढींगरा

अमृतसर, पंजाब की वीर धरती में उत्पन्न मदनलाल ढींगरा उन प्रतिकारी वीरों में से एक थे, जिन्होंने अंग्रेजों को मांद में घुसकर ऐसा साहसिक कार्य किया, जिससे ब्रिटिश सरकार थर्रा उठी।

नवयुवक ढींगरा सन् १९०८ में बी० ए० की परिक्षा पास कर इंजीनियरिंग की शिक्षा पाने के लिए इंगलैण्ड गया। उसने इंडिया हाऊस में रहना आरम्भ किया। 'अभिनव भारत' नामक क्रांतिकारी संख्या की स्थापना यहाँ हो चुकी थी। वीर विनायक दामोदर सावरकार पहले ही भारतीयों को संगठित करने में लगे थे। मदनलाल भी 'अभिनव भारत' की हर बैठक में शामिल होता और जल्दी ही शस्त्र चलाने में दक्ष भी हो गया।

कठिन परीक्षा

वीर सावरकर ने ढींगरा के साहस की परीक्षा लेने के लिये उसकी हथेली पर छुरा मारा, जिस पर ढींगरा ने वीर सावरकार की आँखों में झाँका और खून बहने की तनिक भी परवाह न की। बल्कि हंसने लगा। सावरकार भावविभोर हो गए। उन्होंने उसे गले लगाया, उसका घाव धोया और पट्टी बांध दी। सभी उपस्थित क्रांतिकारी उसके साहस से प्रभावित हुए।

प्रतिशोध

इधर भारत में वीर सावरकार के बड़े भाई गणेश सावरकर को आर्जवन कारावास का दंड देकर अंडमान भेज दिया गया था। उन पर ब्रिटिश सरकार विरोधी कविताएँ छपवाने का अभियोग लगा था। साथ ही देश के अन्य क्रांतिकारियों—कन्हाईलाल दत्त व खुदीराम बोस को सरकार ने फाँसी की सजा दी थी। यह आग में तेल डलने का काम था। इन समाचारों से इंडिया हाऊस के भारतीय देश भक्त छात्र उत्तेजित हो उठे। अतः इनका बदला लेने के लिए कर्नल बाईली को गोली से मारने की योजना बनाई गई। मदनलाल इस काम को करने के लिए चुना गया। कर्नल बाईली इंडिया हाऊस के भारतीयों पर कड़ी नजर रख उनके मामलों में अनुचित दखल देने लगा था। ब्रिटिश सरकार ने उसे इसके लिए नियुक्त किया हुआ था।

अत्याचारी से बदला

१९०९ की पहली जुलाई। एक मित्र मिलन समारोह में बाईली भी उपस्थित था। जहाँगीर हाल में आयोजित इस समारोह में मदनलाल जेब में पिस्तौल रख कर आया था। बाईली बातचीत करता आ रहा था। जैसे ही वह मदनलाल के पास आया उसने बिल्कुल निकट से बाईली पर पिस्तौल से गोली दागदी और वह तत्काल ढेर हो गया। बस क्या था? सारे हाल में हलचल मच गई ढींगरा अपने स्थान पर

शांत व धैर्य के साथ खड़ा था। उसने अपना रिवाल्वर फेंक कर और स्वयं को भीड़ द्वारा पकड़ने दिया।

ढींगरा अपने लक्ष्य भेद के बाद कितना निश्चित था। यह इस बात से जाना जा सकता है कि उस एक जुलाई की रात को वह मीठी नींद सोया रहा। उसने अपने मन को इतना कठोर बना लिया था कि उसके भाई ने उससे मिलने का प्रयत्न किया तो उसने इनकार कर दिया। अलबत्ता, उसने सावरकर और दूसरे मित्रों का स्वागत किया, जो उसे जेल में मिले।

मैं देशभक्त हूँ

ढींगरा को मालूम था कि उसके कार्य का क्या परिणाम हो सकता है। उसने वीर सावरकार से प्रार्थना की कि उसकी इच्छाएं पूरी की जायें, जिनमें प्रमुख ये थीं – उसका अन्तिम संस्कार हिंदू रीति के अनुसार हो। ब्राह्मण वैदिक मंत्रों का पाठ करें और उसकी तमाम चीजें बेच दी जायें। उसके धन को राष्ट्रीय कोष में दान दिया जाये।

ढींगरा ने अपने मुकदमों की पैरवी स्वयं की। उसने अदालत से अनुरोध किया कि हत्या के समय उसके पास जो वक्तव्य था और जिसे पुलिस ने ले लिया था की अदालत में पढ़ा जाये किन्तु अदालत ने नहीं माना। जब न्यायाधीश ने कहा कि "उसे सजा मिलेगी, उसे जो कुछ कहना हो, कह सकता है।" इस पर ढींगरा बोला —मैं तुम्हारी प्रभुसत्ता अपने पर नहीं मानता। तुम अपनी इच्छानुसार कुछ भी करने के लिए स्वतन्त्र हो। पर, याद रखो, वह दिन आएगा जब हम ताकत पकड़ेंगे और तब हम जो चाहेंगे. वह करेंगे।"

ढींगरा ने जज का धन्यवाद करते हुए कहा—"श्रीमान! धन्यवाद, मुझे स्वदेश के लिए मरने का गौरव प्राप्त हुआ।"

भारत में जन्म हो

१७ अगस्त को ढींगरा को फांसी होनी थी। एक दिन पूर्व सारे लंदन में भारी हलचल मच गई जबकि लोगों ने 'डेली न्यूज' पत्र में ढींगरा का वक्तव्य पढ़ा, जिसे वीर सावरकर ने किसी प्रकार छपवाने की व्यवस्था की थी। अपने भावों को प्रकट करते हुए उसने कहा था"...इस प्रयास में मैंने किसी से सलाह नहीं ली और अपनी आत्मा की आवाज सुनकर मैंने अपना कर्त्तव्य निभाया है। एक हिन्दू के नाते मैं अनुभव करता हूं कि मेरे देश की गुलामी भगवान का अपमान है।"

उसने आगे कहा—"हे भगवान! मैं फिर जन्म लूं तो इसी भारत भूमि पर पैदा होऊं और उसी के निमित्त मेरे प्राण निछावर हों, यह मेरी प्रभु से कामना है।"

फांसी का दिन आया और ढींगरा सदा के लिए विदा हो गये। श्याम जी कृष्ण वर्मा ने जेल में उसका अन्तिम संस्कार किया। इस गौरवमय शहादत पर लायड जार्ज ने ढींगरा की देश भक्ति की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। वीर सावरकर ने उस वीर की यादमें बर्लिन में 'मदन तलवार' आरम्भ की। ◆

सुन्दर फरनीचर का प्रगतिशील नाम

डिलाईट

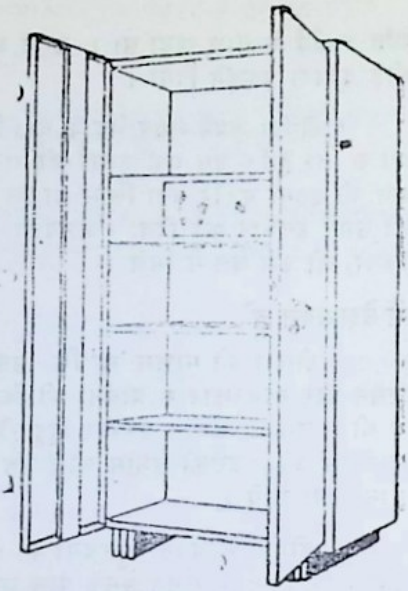

वर्षा उपवन व और कार्यकुशलता के कारण आज डिलाईट पक्की अलमारियां और फर्नीचर सारे भारत में प्रसिद्ध हैं क्योंकि यह देखने में सुन्दर, मजबूत, टिकाऊ और पक्के रंगों में उपलब्ध हैं। दुकान हो या घर, विवाह हो या कोई शुभ अवसर, यह सबका शोभा बढ़ाता है।

आप भी आज डिलाईट फरनीचर खरीद कर अपने घर, आफिस व दुकान की शोभा बढ़ावें और आनन्द पावें।

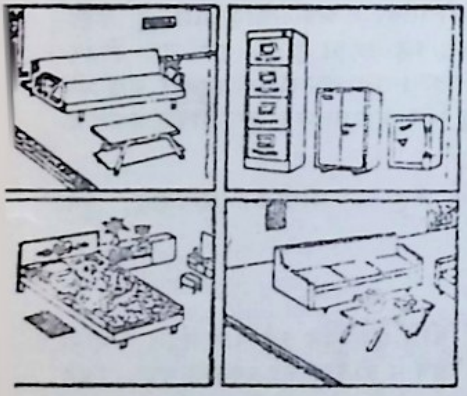

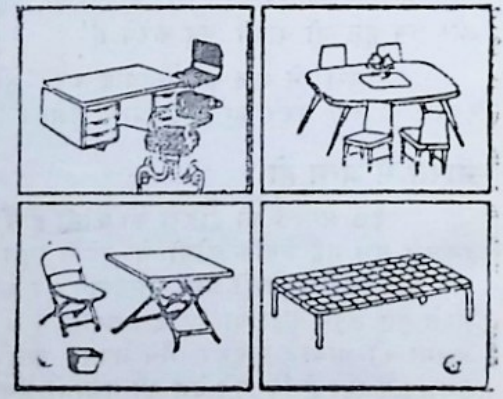

डिलाईट सेफ वर्क्स

[illegible]व रोड, दिल्ली-६. फोन 511380

विक्रेता

काटेज स्टोर, २० विनय नगर मार्कीट, नई दिल्ली।

[illegible]. काश्मीर क्राकरी हाऊस, लक्कड़ बाजार, लुधियाना।

[illegible]. मित्तल ब्रादर्स, सिरकी बाजार, भटिण्डा। ४. निहालचन्द गोपालदास, अबोहर।

[illegible]. महेन्द्रा ब्रादर्स, कोर्ट रोड, मोगा।

[illegible] जैम सेल्स कार्पोरेशन, सेक्टर ७-सी दु० नं० ३० मध्य मार्ग, चण्डीगढ़।

हरयाणा आयरन एण्ड स्टील इण्डस्ट्रीज, बाजार हिसारिया, सिरसा।

लीला इलैक्ट्रिक कं०, ७० कोतवाली रोड, श्री गंगानगर (राज०)।

राणा इण्डस्ट्रीज, लाडपुरा बाजार, कोटा (राज०)

[illegible]. आदर्श इलैक्ट्रिक एण्ड जनरल सप्लायर्ज, नैकाओली, नीमच (म० प्र०)।

[illegible] ओवरसीज ट्रेड एजेन्सीज, केसरगंज, अजमेर।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार की
औषधियां प्रयोग करें

गुरुकुल कासारि

खाँसी की अपूर्व गुणकारी औषधि

उपयोग किसी भी कारण से हुई खाँसी, नजला, जुकाम आदि में लाभदायक

सेवन विधि दिन में तीन बार छोटी चम्मच लेकर उंगली से चाटें।

आँखों के अनेक रोगों के लिए

भीमसेनी सुरमा

....

च्यवनप्राश

उत्तम स्वादिष्ट रसायन

शरीर को बलिष्ठ और कान्तिमय बनाता है।

शारीरिक क्षीणता एवं फेंफड़ों के लिए प्रसिद्ध
आयुर्वेद रसायन

पो० गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (सहारनपुर)

शाखा कार्यालय—६३ गली राजा केदारनाथ
चावड़ी बाजार, दिल्ली-११०००६ फोन नं० २६१४३८

क्या आप
अपने
परिवार
में
प्रभु की
अमर
वाणी
वेद
नहीं
लाएंगे
?

अधिक से अधिक सत्यार्थ-प्रकाश बाँटें

मूल्य : २००) सैकड़ा । २५०) सैकड़ा ।
३००) सैकड़ा । ४५०) सैकड़ा ।

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-५

COSY—COST

An adventure of the Century Cotton Shirting in Soft Soothing Checks with the Rich Woollen Feel

★

Manufacturers :

The Century Spg. & Mfg. Co. Ltd.

"CENTURY BHAWAN"
Dr. Annie Basent Road
Worli, Bombay—40002500

मुद्रक—प्रकाशक—सम्पादक पंडिता राकेश रानी के लिए
रायसीना प्रिंटरी, दिल्ली-६ में छपा ।

जन-ज्ञान (मासिक)
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
करौल बाग, नई दिल्ली-५
दूरभाष : ५६६६३९

D.A.V.P. से स्वीकृत
नवम्बर १९७६

रजि० नं०
डी०—(सी०) २०१
R.N.No. 107119/65

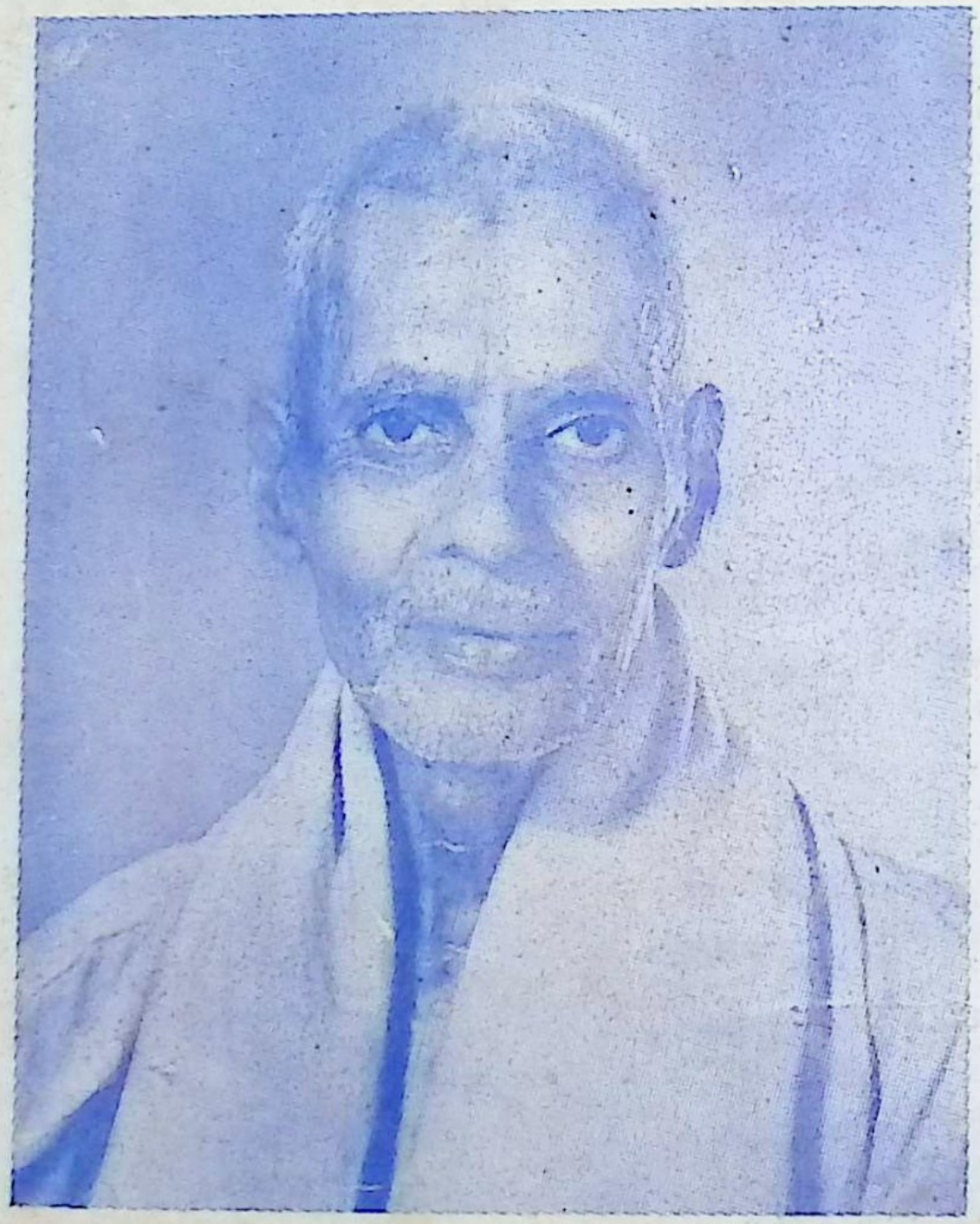

स्वामी मेधानन्द—यथा नाम तथा गुण की साकार प्रतिमा। एक बार जो भी सुना या पढ़ा, उसे तुरन्त अपने स्मृति पटल पर अंकित करने की अद्भुत क्षमता के धनी थे स्वामी जी। दयानन्द संस्थान को उन्होंने जी भर कर सहयोग दिया और अपने अमूल्य सुझावों से भी प्रेरणा प्रदान की। वेद एवं वैदिक धर्म के प्रचार में जीवन के अन्तिम क्षण तक कर्मरत रहे। कर्मयोगी स्वामी जी के निधन पर दयानन्द संस्थान की ओर से दिवंगत प्रेरणा-पुरुष को श्रद्धांजलि।